ॐ

श्री पंच स्तोत्र विधान

रचयिता

संयमस्वर्णमहोत्सवमण्डित आचार्य श्रीविद्यासागरजीमहाराज के शिष्य

अनेक विधान रचयिता बुंदेली संत

मुनि श्री सुव्रतसागरजी महाराज

प्रस्तोता

बा. ब्र. संजय भैया, मुरैना

कृति	:	श्री पंच स्तोत्र विधान
आशीर्वाद	:	संयम स्वर्ण महोत्सव मण्डित आचार्य श्री विद्यासागरजी महाराज
कृतिकार	:	अनेक विधान रचयिता, बुंदेली संत मुनि श्री सुव्रतसागरजी महाराज
संयोजक	:	बा. ब्र. संजय भैयाजी, मुरैना -9425128817
संस्करण	:	प्रथम, ११०० प्रतियाँ
कवर-पृष्ठ	:	प्राची जैन शिवपुरी
प्रसंग	:	२२वाँ चातुर्मास, २०२०, शिवपुरी
लागत मूल्य	:	५०/-
प्रकाशक	:	श्री जैनोदय विद्या समूह
प्राप्ति स्थान	:	१. संजीव कुमार जैन 2/251 सुहाग नगर, फिरोजाबाद (उ.प्र.) सम्पर्क—9412811798, 9412623916 २. निखिल, सुशील जैन करैरा, झाँसी 9806380757, 9407202065
मुद्रक	:	विकास ऑफसेट, भोपाल

पुण्यार्जक परिवार

श्री महेन्द्र बंसल-श्रीमती अंजू बंसल (जैन)

लविश, मार्दव बंसल (जैन)

मार्दव ट्रेडिंग कम्पनी, शिवपुरी (म.प्र.)

मोबाइल—9827018289

अन्तर्भाव

पंच स्तोत्र विधान यह कृति संयम **स्वर्ण महोत्सव मण्डित संतशिरोमणि आचार्य गुरुवर श्री विद्यासागरजी महाराज** के **परम प्रभावक, कविहृदय, अनेक विधान रचयिता, बुंदेली संत शिष्य मुनि श्री सुव्रतसागरजी महाराज** के द्वारा तैयार की गई है। इस कृति में अतिप्राचीन भगवन्तों की स्तुति जो कि भक्तिस्तोत्र के रूप में जगविख्यात हैं जिनमें **श्री भक्तामर स्तोत्र, श्री कल्याणमंदिर स्तोत्र, श्री एकीभाव स्तोत्र, श्री विषापहार स्तोत्र, श्री भूपालजिनचतुर्विंशतिका स्तोत्र** शामिल हैं। जिनका हिन्दी पद्यानुवाद मुनिश्री ने अपनी मधुर एवं सरल लेखनी के माध्यम से किया है। जिनका एक साथ संकलन एवं संयोजन इस कृति में किया गया है। यह कृति उन लोगों के लिए अत्यन्त उपयोगी है जो कि इहलौकिक सम्पत्ति को पाने की भावना से यहाँ-वहाँ भटकते रहते हैं और अपना संसार बढ़ाते रहते हैं। इस कृति में जिनेन्द्र भगवान की भक्ति-पूजा करने का एक नया सोपान तैयार किया गया है जिसके माध्यम से भव्य जीव लौकिक और पारलौकिक समस्त सुख-सम्पदा को प्राप्त कर अपना कल्याण का मार्ग प्रशस्त कर सकते हैं। प्रभु भक्ति और गुणगान आगमानुकूल अत्यन्त सरल भाषा एवं सारभूत शैली में प्रस्तुत किया गया है।

मुनिश्री की १०० से अधिक कृतियाँ हैं जिनमें विधान-पूजा, कहानी, आरती, भजन, नाटक, मुक्तक, कविताएँ आदि सम्मिलित हैं। आपके विधानों में चारों अनुयोगों के विषय समावेश हैं। विधान करते समय ऐसा लगता है कि हम भगवान की भक्ति करने के साथ-साथ स्वाध्याय कर रहे हों। ऐसा प्रतीत होता है कि जो बातें यहाँ कही गईं हैं वे सब बातें हमारे आस-पास के वातावरण में समाविष्ट हैं। सिद्धान्त की बात को भी बड़ी ही सरल भाषा में प्रस्तुत किया गया है।

राजेश, अशोक, अर्चित, पुनीत, नमन, विशाल, रूपेश, सौरभ, रौनक, पीयूष, अभिषेक, रोहित, कलश पाठशाला की बहिनें प्राची, ऐश्वर्या, चाहना, आशी, स्वाति, खुशी, प्रतिभा, रूपाली आदि लोगों ने इस कृति में जो भी सहयोग किया उन सबके लिए बहुत-बहुत साधुवाद। सभी भगवान् की भक्ति करके अपूर्व पुण्यार्जन करेंगे इसी भावना के साथ सभी को सादर जय-जिनेन्द्र!

तुम्हें सारथी बना लिया है, मोक्षपुरी के गजरथ का।
तुरत हमें दर्शन करवा दो, शुद्धातम के तीरथ का॥
कहो कहाँ हस्ताक्षर कर दें, हमको भी स्वीकार करो।
भक्त खड़े नत हाथ जोड़कर, हम सबका उद्धार करो॥

— बा. ब्र. संजय, मुरैना

विषय सूची

विषय	पृ. क्र.
१. मंगलाचरण	०४
२. श्री नवदेवता पूजन	०५
३. सिद्ध भक्ति	०९
४. विधान प्रारम्भ मंगलाचरण	१०
५. श्री भक्तामरजी विधान	११
६. श्री कल्याणमंदिर विधान	१५
७. श्री एकीभाव विधान	१७
८. श्री विषापहार विधान	१९
९. श्री भूपाल जिनचतुर्विंशतिका विधान	२२
१०. श्री समुच्चय पूर्णार्घ्य	३०
११. समुच्चय जयमाला	३१
१२. विधान आरती	३२

मंगल भावना

तेरा मंगल मेरा मंगल, सबका मंगल होवे।
सुखिया होवे सारी दुनियाँ, कोई दुखी न होवे॥
कण-कण मंगल क्षण-क्षण मंगल, जन-जन मंगल होवे।
हे प्रभु! निजमंगल के पहले, जग का मंगल होवे॥१॥तेरा...
जिन माँ बाबुल ने जन्मा है, उनका मंगल होवे।
जिन बन्धु ने पाला पोषा, उनका मंगल होवे॥
जिन मित्रों ने हमें सम्हाला, उनका मंगल होवे।
जिन गुरुओं ने ज्ञान दिया है, उनका मंगल होवे॥२॥ तेरा....
हम जिस दुनियाँ में रहते हैं, उसका मंगल होवे।
हम जिस भारत देश में रहते, उसका मंगल होवे॥
हम जिस राज्य प्रान्त में रहते, उसका मंगल होवे।
हम जिस नगर शहर में रहते, उसका मंगल होवे॥४॥ तेरा...

===

श्री नवदेवता पूजन

(हरिगीतिका)

जब प्रार्थना को कर जुड़े तो, आतमा आकुल हुई।
जब वन्दना को पग उठे तो, वेदना व्याकुल हुई॥
जब साधना को सुर सजे तो, गुनगुनाएँ गीत हम।
जब अर्चना को मन हुआ तो, आ गए जिन-तीर्थ हम॥
अरिहन्त सिद्धाचार्य गुरु-उवझाय साधु जिन-धरम।
जिन-शास्त्र-प्रतिमाएँ जिनालय, देवता ये नव परम॥
नव देवताओं की करें हम, अर्चना पूजें चरण।
बस प्रार्थना हम भक्त की सुन, दीजिये हमको शरण॥

(दोहा)

नव देवों को हम भजें, करें-करें आह्वान।
हृदयासन आसीन हों, भक्तों के भगवान॥

ॐ ह्रीं श्रीअर्हत्-सिद्धाचार्य-उपाध्याय-सर्वसाधु-जिनधर्म-जिनागम-जिनचैत्य-चैत्यालय समूह अत्र अवतर-अवतर...। अत्र तिष्ठ तिष्ठ ठः ठः...। अत्र मम सन्निहितो भव भव वषट्...। (पुष्पांजलिं...)

(सखी)

अपने ही हमको जन्में, फिर मारें और जलाएँ।
फिर पीछे आँसु बहाके, कर हाय! हाय! चिल्लाएँ॥
मृग मरीचिका अपनों की, तुम सम तजने जल लाए।
नव देव हमें आश्रय दो, हम भेंट नमोऽस्तु लाए॥

ॐ ह्रीं श्री नवदेवेभ्यो जन्मजरामृत्युविनाशनाय जलं...।

हम करें भरोसा जिन पर, वे धोखे हमको देते।
हम दिल में जिन्हें वसाएँ, वे राख हमें कर देते॥
तुम सम अपनों की तृष्णा, हम तजने चंदन लाए।
नव देव हमें आश्रय दो, हम भेंट नमोऽस्तु लाए॥

ॐ ह्रीं श्री नवदेवेभ्यः संसारतापविनाशनाय चंदनं...।

हम जिनको गले लगाएँ, वे गला हमारा घोंटें।
वे हमको खूब रुलाएँ, हम जिनके आँसू पोंछें॥
यह अपनों की आकुलता, तजने हम अक्षत लाए।

नव देव हमें आश्रय दो, हम भेंट नमोऽस्तु लाए॥

ॐ ह्रीं श्री नवदेवेभ्यो अक्षयपदप्राप्तये अक्षतान्...।

अपने ही फाँसी दें फिर, फोटो पर माला डालें।
वाणी के बाण चलाके, चित् छिन्न-भिन्न कर डालें॥
तुम सम अपनों के काँटे, तजने पुष्पों को लाए।
नव देव हमें आश्रय दो, हम भेंट नमोऽस्तु लाए॥

ॐ ह्रीं श्री नवदेवेभ्यः कामबाणविध्वंसनाय पुष्पाणि...।

खुद भूखे प्यासे रहकर, अपनों की भूख मिटाई।
जीवन में विष वे घोलें, जिनको दें दूध मलाई॥
विश्वासघात अपनों का, सहने नैवेद्य चढ़ाएँ।
नव देव हमें आश्रय दो, हम भेंट नमोऽस्तु लाए॥

ॐ ह्रीं श्री नवदेवेभ्यः क्षुधारोगविनाशनाय नैवेद्यं...।

गोदी में जिन्हें खिलाएँ, हम काजल जिन्हें लगाएँ।
हथकड़ी बेड़ियाँ वे दें, हम चलना जिन्हें सिखाएँ॥
यों तजें मोह माया ज्यों, तुम तज निजदीप जलाए।
नव देव हमें आश्रय दो, हम भेंट नमोऽस्तु लाए॥

ॐ ह्रीं श्री नवदेवेभ्यो मोहान्धकारविनाशनाय दीपं...।

घर जिनका यहाँ वसाकर, जी-जान जिन्हें हम सौंपें।
वे घर-घर हमें फिराएँ, पीछे से चाकू घौंपें॥
बेरुखी तजें अपनों की, सो धूप भूप को लाए।
नव देव हमें आश्रय दो, हम भेंट नमोऽस्तु लाए॥

ॐ ह्रीं श्री नवदेवेभ्यो अष्टकर्मदहनाय धूपं...।

बदनाम हुए हम जिनको, बदनाम हमें वे करते।
सुख चैन वही तो छीनें, फिर हम क्यों उन पर मरते॥
अपनों की आँख-मिचौली, तुम सम तजने फल लाए।
नव देव हमें आश्रय दो, हम भेंट नमोऽस्तु लाए॥

ॐ ह्रीं श्री नवदेवेभ्यो मोक्षफलप्राप्तये फलं...।

हम जिनको सगा समझते, वे देकर दगा दबाएँ।
फिर देकर दाग जलाएँ, हम जिन पर प्राण लुटाएँ॥

ये दाग दगा अपनों के, तजने को अर्घ्य चढ़ाएँ।
नव देव हमें आश्रय दो, हम भेंट नमोऽस्तु लाए॥

ॐ ह्रीं श्री नवदेवेभ्यो अनर्घपदप्राप्तये अर्घ्यं...।

जयमाला (दोहा)

जिननवदेवा पूज्य हैं, जिन की जोड़ न तोड़।
अतः कहें जयमालिका, हाथ जोड़ सिर मोड़॥

(भुजंगप्रयात)

जितेन्द्री हितैषी अरिहन्त प्यारे, हमें तारते सो नमोऽस्तु हमारे।
निकर्मा सभी सिद्ध शुद्धात्म धारे, तुम्हीं भक्त के लक्ष्य वन्दन हमारे॥ 1॥
परम पूज्य आचार्य दीक्षादि दानी, यथाजात रत्नत्रयी को नमामि।
हमें मोक्ष का मार्ग दें तत्त्वज्ञानी, नमोऽस्तु तुम्हें हो उपाध्याय स्वामी॥ 2॥
दिगम्बर निरम्बर चिदातम विहारी, सभी साधुओं को नमोऽस्तु हमारी।
यही पंचपरमेष्ठी आदर्श अपने, इन्हें पूजने से हुए पूर्ण सपने॥ 3॥
सदा चक्र जिनधर्म का ही चलेगा, इसी से चिदानन्द हमको मिलेगा।
जिनागम करें पूर्ण अध्यात्म शान्ति, हरें मोह मिथ्यात्व अज्ञान भ्रांति॥ 4॥
जगत् पूज्य जिनबिम्ब हैं चैत्य साँचे, करें दर्श तो भक्त भक्ति से नाँचें।
कृत्रिम अकृत्रिम जिनालय हमारे, समोसर्ण जैसे हमें हैं सहारे॥ 5॥
यही देवता हैं नवों पूज्य स्वामी, इन्हीं की कृपा से मिले मुक्तिरानी।
इन्हीं के मिलें दर्श जब पुण्य जागें, इन्हें पूजने से सभी कष्ट भागें॥ 6॥
जपें जाप तो शुद्ध आतम बनेगी, धरें ध्यान तो ज्ञान ज्योति जलेगी।
अतः प्राप्त छाया इन्हीं की हमें हो, इसी से नमोऽस्तु सदा ही इन्हें हो॥ 7॥
हमें प्राप्त रत्नत्रयी धर्म होवे, पुनः भेद विज्ञान से कर्म खोवें।
नवों देवता से धरें प्रेम हम भी, बनें संत अरिहन्त फिर सिद्ध हम भी॥ 8॥
हमें रूप सत्यं शिवं सुन्दरं दो, चले आए हम भी तभी मंदिरं को।
कि जब तक यहाँ चाँद तारे रहेंगे, सदा गीत 'सुव्रत' तो गाते रहेंगे॥ 9॥

(दोहा)

मुक्तिरमा के धाम हैं, चित् चैतन्य मुकाम।
परमपूज्य नवदेव को, बारम्बार प्रणाम॥

ॐ ह्रीं श्री अर्हत्-सिद्धाचार्य-उपाध्याय-सर्वसाधु-जिनधर्म-जिनागम-जिनचैत्य-चैत्यालयेभ्यो जयमाला पूर्णार्घ्यं...।

(दोहा)

करें पूज्य नवदेवता, विश्वशान्ति कल्याण।
प्रासुक जल की धार दे, हम पूजत भगवान॥

(शान्तये शान्तिधारा)

कल्पवृक्ष के पुष्पसम, पुष्पांजलि पद लाए।
भव दुःखों को मेंट दो, नवदेवा जिनराय॥

(पुष्पांजलिं...)

चौबीसी का अर्घ्य

(लय—चौबीसी वत्...)

यह अर्घ्य करो स्वीकार, आतम के रसिया।
हम पाएँ आत्म फुहार, सींचें निज बगिया॥
तीर्थंकर प्रभु चौबीस, आत्मिक शान्ति भरें।
हमको दे दो आशीष, हम तो नमोऽस्तु करें॥

ॐ ह्रीं श्री वृषभादिवीरान्तेभ्यो अनर्घपदप्राप्तये अर्घ्यं...।

आचार्य श्री विद्यासागरजी महाराज का अर्घ्य

(ज्ञानोदय)

अतुलनीय विद्यागुरुवरजी, तुल न सके उपकरणों से।
सब उपमाएँ फीकी पड़तीं, सज न सके आभरणों से॥
यूँ तो गुरु के सिर पर कोई, ताज नहीं आवाज नहीं।
पर ऐसा है कौन यहाँ दिल, जिस पर गुरु का राज नहीं॥

ॐ ह्रूं आचार्य गुरुवर श्रीविद्यासागर मुनीन्द्राय अनर्घपदप्राप्तये अर्घ्यं...।

मुनि श्री सुव्रतसागरजी महाराज का अर्घ्य

(ज्ञानोदय)

अष्ट द्रव्य ले सोच रहे हम, और समर्पित क्या कर दें।
तन मन जीवन गुरु चरणों में, जल्दी अर्पित हम कर दें॥
गुरु चरणों के योग्य बनें हम, सु-व्रत दान हमें दे दो।
कर नमोऽस्तु यह अर्घ्य चढ़ाएँ, अपनी शरण हमें ले लो॥

ॐ ह्रः श्री सुव्रतसागर मुनीन्द्राय अनर्घपदप्राप्तये अर्घ्यं...।

सिद्धभक्ति (प्राकृत)

असरीरा जीवघणा, उवजुत्ता दंसणेय णाणेय।
सायार मणायारा, लक्खणमेयं तु सिद्धाणं॥
मूलोत्तर पयडीणं, बन्धोदयसत्त-कम्म उम्मुक्का।
मंगलभूदा सिद्धा, अट्ठगुणा तीद संसारा॥
अट्ठ वियकम्म वियला, सीदीभूदा णिरंजणा णिच्चा।
अट्ठ गुणा किदकिच्चा, लोयग्गणिवासिणो सिद्धा॥
सिद्धा णट्ठट्ठ मला, विसुद्ध बुद्धीय लद्धि सब्भावा।
तिहुअणसिर-सेहरया, पसियंतु भडायरा सव्वे॥
गमणागमण विमुक्के, विहडियकम्मपयडि संघारा।
सासह सुह संपत्ते, ते सिद्धा वंदिमो णिच्चं॥
जय मंगल भूदाणं, विमलाणं णाणदंसणमयाणं।
तइलोइ-सेहराणं, णमो सदा सव्व सिद्धाणं॥
सम्मत्त-णाणदंसण-वीरिय सुहुमं तहेव अवग्गहणं।
अगुरुलघु अव्वावाहं, अट्ठगुणा होंति सिद्धाणं॥
तवसिद्धे णयसिद्धे, संजमसिद्धे चरित्रसिद्धे य।
णाणम्मि दंसणम्मि य, सिद्धे सिरसा णमस्सामि॥

इच्छामि भंते! सिद्धभत्तिकाउस्सग्गोकओ तस्सालोचेउं सम्मणाण सम्मदंसण सम्मचरित्त जुत्ताणं अट्ठविह कम्म-विप्पमुक्क ाणं अट्ठगुण-संपण्णाणं उड्ढलोयमत्थयम्मि पइट्ठियाणं तवसिद्धाणं णयसिद्धाणं संजमसिद्धाणं चरित्तसिद्धाणं अतीताणागदवट्टमाणकालत्तय सिद्धाणं सव्वसिद्धाणं णिच्चकालं अंचेमि पुज्जेमि वंदामि णमंसामि दुक्खक्खओ कम्मक्खओ बोहिलाओ सुगइगमणं समाहिमरणं जिणगुणसम्पत्ति होउ मज्झं।

विधान प्रारम्भ

मंगलाचरण

ओम् नमः सिद्धेभ्यः -४

(जोगीरासा)

श्रद्धा भक्ति समर्पण वाले, जिन अध्यात्म हमारे।
त्याग तपस्या पूजाओं ने, सबको दिए सहारे॥
सो भक्तामर कल्याणमंदिर, एकीभाव को पूजें।
विषापहार भूपाल स्तोत्र से, नमोऽस्तु के स्वर गूँजें॥१॥

ओम् नमः सिद्धेभ्यः -४

कर्म काटने के अद्‌भुत ये, साधन रहे निराले।
जब तक कर्म कटें ना तब तक, पुण्य बढ़ाने वाले॥
पाप कटें सुख शान्ति ज्ञान दें, जैनधर्म चमकाएँ।
'विद्या' के 'सुव्रत' भक्तों का, भाग्य कमल महकाएँ॥२॥

ओम् नमः सिद्धेभ्यः -४

तेरा मंगल मेरा मंगल, सबका मंगल होवे।
सुखिया होवे सारी दुनियाँ, कोई दुखी न होवे॥
कण-कण मंगल क्षण-क्षण मंगल, जन-जन मंगल होवे।
पंचस्तोत्र को करके नमोऽस्तु, सबका मंगल होवे॥३॥

ओम् नमः सिद्धेभ्यः -४

❑❑❑

श्री भक्तामर विधान

ईसा की सातवीं शताब्दी में आचार्य मानतुंगजी द्वारा वृषभनाथ भगवान् की स्तुति करते हुए रचित यह भक्तिपूर्ण काव्य-रचना है, इसमें ४८ काव्य वसंततिलका छन्द में रचे गए हैं। यह पाठ दिगम्बर और श्वेताम्बर दोनों आम्नाय में समान रूप से समादृत है। इतिहास के अनुसार आचार्य मानतुंग महाराज की भक्तामरस्तोत्र की भक्ति के प्रभाव से अड़तालीस कोठरियों के ताले टूटने से जिनशासन की प्रभावना हुई थी जो अभी तक चल रही है।

स्थापना

(दोहा)

वृषभनाथ की अर्चना, भक्तामर के साथ।
आज रचाएँ भक्त हम, अतः झुकाएँ माथ॥

(चौपाई)

मानतुंग से भाव नहीं हैं, चक्रि इन्द्र से द्रव्य नहीं हैं।
फिर भी पूजन तो करते हैं, वृषभनाथ प्रभु को भजते हैं॥
अतः पुकारें हाथ जोड़कर, शीश झुकाकर द्वन्द्व छोड़कर।
अंदर बाहर जय-जय गूँजे, हर प्रदेश बस तुमको पूजे॥
आह्वानन कर जोड़ें कड़ियाँ, प्रभु मिलन की आईं घड़ियाँ।
चौक रंगोली पुरा रहा मन, हृदय कमल ने दिया सिंहासन॥
विरह वेदना शीघ्र मिटा दो, या तो अपने पास बुला लो।
या अखियों से आओ भगवन्, साथ रहेंगे फिर तो हम-तुम॥

(सोरठा)

मिले मुक्ति का योग, शुद्ध आत्म उपयोग से।
अतः भक्ति का योग, करें शुद्ध त्रय योग से॥

ॐ ह्रीं श्रीं क्लींमहाबीजाक्षरसम्पन्न श्रीवृषभनाथजिनेन्द्र! अत्र अवतर अवतर...। अत्र तिष्ठ तिष्ठ ठः ठः...। अत्र मम सन्निहितो भव भव वषट्...। (पुष्पांजलिं...)

मानतुंग सी भक्ति नहीं है, चक्रि इन्द्र सी शक्ति नहीं है।
फिर भी पूजन तो करते हैं, वृषभनाथ प्रभु को भजते हैं॥

अतः भक्ति को बिना छिपाए, प्रासुक जल पूजन को लाए।
चरण चढ़ाएँ करके नमोऽस्तु, भक्ति शक्ति के योग्य बना तू॥

ॐ ह्रीं श्रीं क्लींमहाबीजाक्षरसम्पन्न श्रीवृषभनाथजिनेन्द्राय जन्म-जरा-मृत्यु-विनाशनाय जलं...।

मानतुंग सी नहीं है समता, चक्रि इन्द्र सा सुख नहीं जमता।
फिर भी पूजन तो करते हैं, वृषभनाथ प्रभु को भजते हैं॥
अतः शक्ति को बिना छिपाए, वन्दन को चंदन हम लाए॥
चरण चढ़ाएँ करके नमोऽस्तु, संकट में समता सिखला तू॥

ॐ ह्रीं श्रीं क्लींमहाबीजाक्षरसम्पन्न श्रीवृषभनाथजिनेन्द्राय संसारताप-विनाशनाय चंदनं...।

मानतुंग सा रूप नहीं है, चक्रि इन्द्र से भूप नहीं हैं।
फिर भी पूजन तो करते हैं, वृषभनाथ प्रभु को भजते हैं॥
अतः शक्ति को बिना छिपाए, उज्ज्वल तंडुल हम भी लाए।
पुंज चढ़ाएँ करके नमोऽस्तु, जिन दीक्षा के योग्य बना तू॥

ॐ ह्रीं श्रीं क्लींमहाबीजाक्षरसम्पन्न श्रीवृषभनाथजिनेन्द्राय अक्षयपदप्राप्तये अक्षतान्...।

मानतुंग सा त्याग नहीं है, चक्रि इन्द्र सा राग नहीं है।
फिर भी पूजन तो करते हैं, वृषभनाथ प्रभु को भजते हैं॥
अतः शक्ति को बिना छिपाए, पुष्प अंजुली में हम लाए।
तुम्हें चढ़ाएँ करके नमोऽस्तु, कमलासन के योग्य बना तू॥

ॐ ह्रीं श्रीं क्लींमहाबीजाक्षरसम्पन्न श्रीवृषभनाथजिनेन्द्राय कामबाण-विध्वंसनाय पुष्पाणि...।

मानतुंग से योग नहीं हैं, चक्रि इन्द्र से भोग नहीं हैं।
फिर भी पूजन तो करते हैं, वृषभनाथ प्रभु को भजते हैं॥
अतः शक्ति को बिना छिपाए, ये नैवेद्य शुद्ध ले आए।
तुम्हें चढ़ाएँ करके नमोऽस्तु, वीतरागता रस से भर तू॥

ॐ ह्रीं श्रीं क्लींमहाबीजाक्षरसम्पन्न श्रीवृषभनाथजिनेन्द्राय क्षुधारोग-विनाशनाय नैवेद्यं...।

मानतुंग सा ध्यान नहीं है, चक्रि इन्द्र का मान नहीं है।
फिर भी पूजन तो करते हैं, वृषभनाथ प्रभु को भजते हैं॥
अतः शक्ति को बिना छिपाए, पूजन को दीपक हम लाए।
करें आरती करके नमोऽस्तु, समवसरण के योग्य बना तू॥

ॐ ह्रीं श्रीं क्लींमहाबीजाक्षरसम्पन्न श्रीवृषभनाथजिनेन्द्राय मोहान्धकार-विनाशनाय दीपं...।

मानतुंग सी नहीं साधना, चक्रि इन्द्र सी नहीं कामना।
फिर भी पूजन तो करते हैं, वृषभनाथ प्रभु को भजते हैं॥
अतः शक्ति को बिना छिपाए, धूप सुगंधित हम ले आए।
तुम्हें चढ़ाएँ करके नमोऽस्तु, तीर्थंकर के योग्य बना तू॥

ॐ ह्रीं श्रीं क्लींमहाबीजाक्षरसम्पन्न श्रीवृषभनाथजिनेन्द्राय अष्टकर्मदहनाय धूपं...।

मानतुंग सा रत्नत्रय ना, चक्रि इन्द्र से रत्न विजय ना।
फिर भी पूजन तो करते हैं, वृषभनाथ प्रभु को भजते हैं॥
अतः शक्ति को बिना छिपाए, प्रासुक श्रीफल हम भी लाए।
तुम्हें चढ़ाएँ करके नमोऽस्तु, मुक्ति वधू के योग्य बना तू॥

ॐ ह्रीं श्रीं क्लींमहाबीजाक्षरसम्पन्न श्रीवृषभनाथजिनेन्द्राय मोक्षफलप्राप्तये फलं...।

मानतुंग सा नहीं आचरण, चक्रि इन्द्र सा नहीं समर्पण।
फिर भी पूजन तो करते हैं, वृषभनाथ प्रभु को भजते हैं॥
अतः शक्ति को बिना छिपाए, अर्घ्य बनाकर हम भी लाए।
तुम्हें चढ़ाएँ करके नमोऽस्तु, सिद्धालय के योग्य बना तू॥

ॐ ह्रीं श्रीं क्लींमहाबीजाक्षरसम्पन्न श्रीवृषभनाथजिनेन्द्राय अनर्घपदप्राप्तये अर्घ्यं...।

पंचकल्याणक अर्घ्य (दोहा)

दोज कृष्ण आषाढ़ को, सर्वारथ सुर त्याग।
गर्भ वसे मरुमात के, 'जिन' से है अनुराग॥

ॐ ह्रीं आषाढ़कृष्णद्वितीयायां गर्भमङ्गलमण्डिताय श्रीवृषभनाथजिनेन्द्राय अर्घ्यं...।

नाभिराय के आँगने, जन्म लिए भगवान्।
चैत्र कृष्ण नवमीं हुई, जग में पूज्य महान्॥

ॐ ह्रीं चैत्रकृष्णनवम्यां जन्ममङ्गलमण्डिताय श्रीवृषभनाथजिनेन्द्राय अर्घ्यं...।

चैत्र श्याम नवमीं दिना, बने दिगम्बर नाथ।
मोह तजा आतम भजा, जिन्हें नमें नत माथ॥

ॐ ह्रीं चैत्रकृष्णनवम्यां तपोमङ्गलमण्डिताय श्रीवृषभनाथजिनेन्द्राय अर्घ्यं...।

ग्यारस फाल्गुन कृष्ण में, घातिकर्म सब नाश।
बने केवली लोक ये, नम्र हुआ बन दास॥

ॐ ह्रीं फाल्गुनकृष्ण-एकादश्यां ज्ञानमङ्गलमण्डिताय श्रीवृषभनाथजिनेन्द्राय अर्घ्यं...।

माघ कृष्ण चौदस दिना, हरे कर्म का भार।
हिमगिरि से शिवपुर गए, हम पाए त्यौहार॥

ॐ ह्रीं माघकृष्णचतुर्दश्यां मोक्षमङ्गलमण्डिताय श्रीवृषभनाथजिनेन्द्राय अर्घ्यं...।

अर्घ्यावली

१. सर्वविघ्नविनाशक - जिनपदवन्दन

(वसंततिलका)

भक्तामर - प्रणत - मौलि - मणि -प्रभाणा-
मुद्योतकं दलित - पाप - तमो - वितानम्।
सम्यक् प्रणम्य जिन - पाद - युगं युगादा-
वालम्बनं भव - जले पततां जनानाम्॥

(विष्णु)

भक्त सुरों के नत मुकुटों की, मणि चमकाते जो।
जग में फैला पाप-अँधेरा, पूर्ण मिटाते जो।
भव-जल-पतितों के अवलंबन, बने युगादिक में।
उन जिन-चरण-कमल को सम्यक्, करूँ नमोऽस्तु मैं॥

ॐ ह्रीं विश्वविघ्नहारक-क्लींमहाबीजाक्षरसम्पन्न श्रीवृषभजिनाय अर्घ्यं...।

२. सकलरोग नाशक - स्तुति का संकल्प

यः संस्तुतः सकल-वाङ्मय - तत्त्व-बोधा-
दुद्भूत-बुद्धि - पटुभिः सुर - लोक- नाथैः।
स्तोत्रैर्जगत् - त्रितय - चित्त - हरैरुदारैः,
स्तोष्ये किलाहमपि तं प्रथमं जिनेन्द्रम्॥

सकल जिनागम तत्त्वज्ञान से, बुद्धि कला पाके।
त्रय जग का चित हरने वाले, गीत रचा गा के।
सुर पतियों ने जिन जिनवर का, जग में यश गाया।
उन ही प्रथम जिनेश्वर की मैं, स्तुति करने आया॥

ॐ ह्रीं नानामरसंस्तुत-सकलरोगहारक-क्लींमहाबीजाक्षरसम्पन्न श्रीवृषभजिनाय अर्घ्यं...।

३. सर्वसिद्धिदायक - लघुता अभिव्यक्ति

बुद्ध्या विनापि विबुधार्चित - पाद - पीठ!
स्तोतुं समुद्यत - मतिर्विगत - त्रपोऽहम्
बालं विहाय जल -संस्थित-मिन्दु-बिम्ब-
मन्यः क इच्छति जनः सहसा ग्रहीतुम्॥

जिनके चरण कमल देवों से, नित अर्चित माने।
मैं निर्लज्ज बुद्धि बिन उनके, उद्यत गुण गाने।
जैसे जल में चन्द्र बिम्ब जो, लगे ठहरने को।
तो बच्चे बिन कौन? अन्य वह, चले पकड़ने को॥

ॐ ह्रीं मत्यादिसुज्ञानप्रकाशक-क्लींमहाबीजाक्षरसम्पन्न श्रीवृषभजिनाय अर्घ्यं...।

४. जलजन्तु-मोचक - अवर्णनीय जिनवर गुण

वक्तुं गुणान्गुण -समुद्र ! शशाङ्क-कान्तान्,
कस्ते क्षमः सुर - गुरु-प्रतिमोऽपि बुद्ध्या।
कल्पान्त-काल - पवनोद्धत - नक्र- चक्रम्,
को वा तरीतुमलमम्बुनिधिं भुजाभ्याम्॥

चारु चन्द्र सम गुण-समुद्र के, गुण-गण कौन कहे?
सुरपति जैसा भी निजमति से, कैसे उन्हें कहें?
मच्छ समूहों के सागर में, जब तूफाँ उठता।
तो वह अपने बाहुबलों से, कौन तैर सकता?॥

ॐ ह्रीं नानादुःखसमुद्रतारक-क्लींमहाबीजाक्षरसहिताय-श्रीवृषभजिनाय अर्घ्यं...।

५. अक्षिरोग संहारक - उमड़ती हुई भक्ति प्रेरणा

सोऽहं तथापि तव भक्ति - वशान्मुनीश!
कर्तुं स्तवं विगत - शक्ति - रपि प्रवृत्तः।
प्रीत्यात्म - वीर्य - मविचार्य मृगी मृगेन्द्रम्
नाभ्येति किं निज-शिशोः परिपालनार्थम्॥

हे मुनीश! बस भक्ति भावना, से लाचार हुआ।
शक्ति हीन तुमरी थुति करने, मैं तैयार हुआ।
जैसे निज बल बिना विचारे, हिरणी कैसे भी।
बस प्रीती से शिशु रक्षा को, लड़े शेर से भी॥

ॐ ह्रीं सकलकार्यसिद्धिकारक-क्लींमहाबीजाक्षरसम्पन्न श्रीवृषभजिनाय अर्घ्यं...।

६. सरस्वती-भगवती-विद्या प्रसारक - स्तवन में मात्र भक्ति ही कारण

अल्प- श्रुतं - श्रुतवतां परिहास धाम,
त्वद्-भक्तिरेव मुखरी कुरुते बलान्माम्।

यत्कोकिलः किल मधौ मधुरं विरौति,
तच्चाम्र -चारु -कलिका-निकरैक -हेतुः॥

मैं मूरख तो विद्वानों से, हँसी पात्र देखो।
लेकिन जबरन भक्ति आपकी, कहे बोलने को।
आम मञ्जरी की ज्यों कोयल, देखे फुलबारी।
तो होकर मजबूर बोलती, कुहु कुहु की वाणी॥

ॐ ह्रीं याचितार्थप्रतिपादनशक्तिसंपन्न-क्लींमहाबीजाक्षरसम्पन्न-श्रीवृषभजिनाय अर्घ्यं...।

७. सर्वदुरित संकट क्षुद्रोपद्रव निवारक-पापक्षयी जिनवर स्तुति

त्वत्संस्तवेन भव - संतति-सन्निबद्धम्,
पापं क्षणात्क्षयमुपैति शरीरभाजाम्।
आक्रान्त - लोक- मलि-नील-मशेष-माशु,
सूर्यांशु- भिन्न-मिव शार्वर-मन्धकारम्॥

भौंरे जैसा रात अँधेरा, जो जग को ढाँके।
सूर्य किरण को देख भागकर, दूर कहीं काँपे।
वैसे भव-भव में जीवों से, जो भी पाप हुए।
हे प्रभु! तेरे संस्तव से वे, क्षण में नाश हुए॥

ॐ ह्रीं सकलपापफलकुष्टनिवारक-क्लींमहाबीजाक्षरसम्पन्न-श्रीवृषभजिनाय अर्घ्यं...।

८. सर्वारिष्ट योग निवारक-प्रभु की प्रभुता का प्रभाव

मत्वेति नाथ ! तव संस्तवनं मयेद -
मारभ्यते तनु- धियापि तव प्रभावात्।
चेतो हरिष्यति सतां नलिनी-दलेषु ,
मुक्ता-फल - द्युति-मुपैति ननूद-बिन्दुः॥

अल्प बुद्धि वाले मैंने यह, शुभ आरम्भ किया।
नाथ! आपका संस्तव मानो, छन्दोबद्ध किया।
सज्जन जन का मन हर लेगा, कृपा आपकी से।
कमल पत्र पर जैसे जल कण, चमकें मोती से॥

ॐ ह्रीं अनेकसंकट-संसारदुःखनिवारक-क्लींमहाबीजाक्षरसम्पन्न-श्रीवृषभजिनाय अर्घ्यं...।

९. कथा ही पापनाशक है

आस्तां तव स्तवन - मस्त-समस्त-दोषं,
त्वत्सङ्कथाऽपि जगतां दुरितानि हन्ति ।
दूरे सहस्त्रकिरणः कुरुते प्रभैव,
पद्माकरेषु जलजानि विकासभाञ्जि॥

सूरज दूर रहे बस उसकी, किरणें ही मिलते।
पद्म सरोवर के सब पंकज, विकसित हों खिलते।
हे! प्रभु विमल आपका संस्तव, उसका कहना क्या?
केवल कथा आपकी जग की, हर ले व्यथा कथा॥

ॐ ह्रीं सकलमनोवांछितफलदायक-क्लींमहाबीजाक्षरसम्पन्न-श्रीवृषभजिनाय अर्घ्यं...।

१०. कूकरविषनिवारक-भगवत् पददातृ भक्ति

नात्यद्-भुतं भुवन - भूषण ! भूत-नाथ!
भूतैर्गुणैर्भुवि भवन्त - मभिष्टुवन्तः,
तुल्या भवन्ति भवतो ननु तेन किं वा
भूत्याश्रितं य इह नात्मसमं करोति॥

भूतनाथ हे! जग आभूषण, इसमें विस्मय ना।
भू पर सद्गुण से थुति करता, तुम सम तुल्य बना।
आखिर उस स्वामी से क्या? जो, अपने आश्रित को।
अपना वैभव दे अपने सम, कभी न करता हो॥

ॐ ह्रीं अर्हज्जिनस्मरणजिनसम्भूत-क्लीं महाबीजाक्षरसहित-श्रीवृषभजिनाय अर्घ्यं...।

११. अभीप्सित आकर्षक-जिनदर्शन की महिमा

दृष्ट्वा भवन्त मनिमेष - विलोकनीयम्,
नान्यत्र - तोष- मुपयाति जनस्य चक्षुः
पीत्वा पयः शशिकर-द्युति - दुग्ध-सिन्धोः,
क्षारं जलं जलनिधे रसितुं क इच्छेत् ?॥

चन्द्र किरण सम क्षीर सिन्धु का, पीकर जल मीठा।
क्षारसिन्धु का कौन चाहता, पीना जल तीखा।

यों ही बिना पलक झपकाये, दर्शन योग्य तुम्हीं।
तुम्हें देखकर जग की नजरें, टिके न अन्य कहीं॥

ॐ ह्रीं सकलतुष्टिपुष्टिकारक-क्लींमहाबीजाक्षरसम्पन्न श्रीवृषभजिनाय अर्घ्यं...।

१२. हस्ति-मद विदारक, वांछित रूप प्रदायक-अनुपम सौन्दर्य

यैः शान्त-राग-रुचिभिः परमाणुभिस्-त्वम्,
निर्मापितस्- त्रि - भुवनैक - ललाम-भूत !
तावन्त एव खलु तेऽप्यणवः पृथिव्याम्,
यत्ते समान- मपरं न हि रूप-मस्ति॥

अद्वितीय जो एक त्रिजग में, तन सुन्दर प्यारा।
जिन शान्तिप्रिय अणुओं से वह, निर्मापित न्यारा।
भू पर वे अणु बस उतने ही, बने जिन्हें पूजा।
अतः आप सम रूप सलौना, दिखे नहीं दूजा॥

ॐ ह्रीं वांछितरूपफलप्रदायक-क्लींमहाबीजाक्षरसम्पन्न श्रीवृषभजिनाय अर्घ्यं...।

१३. लक्ष्मी-सुख प्रदायक, स्वशरीर रक्षक-सर्व उपमा विजयी मुख

वक्त्रं क्व ते सुर - नरोरग-नेत्र-हारि,
निःशेष - निर्जित - जगत्त्रितयोपमानम् ।
बिम्बं कलङ्क - मलिनं क्व निशाकरस्य,
यद्वासरे भवति पाण्डुपलाश-कल्पम् ।।

कहाँ आपका मुख अति सुन्दर, सबके नेत्र हरे?
त्रय जग की सब उपमाओं पर, जो जय-विजय करे।
और कहाँ वह मलिन चन्द्र जो, दागी कहलाए?
दिन में जिसकी सुन्दरता तो, फीकी पड़ जाए॥

ॐ ह्रीं लक्ष्मीसुखविधायक-क्लींमहाबीजाक्षरसम्पन्न श्रीवृषभजिनाय अर्घ्यं...।

१४. आधि-व्याधि नाशक-लोकव्यापी गुण

सम्पूर्ण- मण्डल-शशाङ्क - कला-कलाप-
शुभ्रा गुणास् - त्रि-भुवनं तव लङ्घयन्ति।
ये संश्रितास् - त्रि-जगदीश्वर नाथ-मेकम्,
कस्तान् निवारयति सञ्चरतो यथेष्टम्॥

पूर्ण चन्द्रमण्डल सम उज्ज्वल, गुण समूह तेरे।
तीन लोक को लाँघे जिनके, कण-कण में डेरे।
मिलती जिनवर देव आपकी, उत्तम शरण जिन्हें।
जग में मनवांछित विचरण से, रोके कौन उन्हें ?॥

ॐ ह्रीं भूतप्रेतादिभयनिवारक क्लींमहाबीजाक्षरसम्पन्न श्रीवृषभजिनाय अर्घ्यं...।

१५. सम्मान सौभाग्य सम्बर्द्धक-अचल मेरु के समान प्रभुता की दृढ़ता

चित्रं - किमत्र यदि ते त्रिदशाङ्ग-नाभिर्-
नीतं मनागपि मनो न विकार - मार्गम् ।
कल्पान्त - काल - मरुता चलिताचलेन,
किं मन्दराद्रि-शिखरं चलितं कदाचित्॥

पर्वत कंपित करने वाले, प्रलयकाल से भी।
सुमेरु पर्वत क्या हिल सकता, कभी जरा सा भी।
समद अप्सराओं से ऐसे, थोड़ा भी प्रभु मन।
कभी न विकृत होता इसमें, अचरज क्या? भगवन्॥

ॐ ह्रीं मेरुवन्मनोबलकारक-क्लींमहाबीजाक्षरसम्पन्न श्रीवृषभजिनाय अर्घ्यं...।

१६. सर्व विजयदायक-प्रभो! आप अनोखे दीपक हो

निर्धूम - वर्ति - रपवर्जित - तैल-पूरः,
कृत्स्नं जगत्त्रय - मिदं प्रकटीकरोषि।
गम्यो न जातु मरुतां चलिताचलानाम्,
दीपोऽपरस्त्वमसि नाथ ! जगत्प्रकाशः॥

धूम्र बाति बिन तेल ज्योति बिन, अजब उजाले हो।
फिर भी त्रय जग करो प्रकाशित, जगत उजाले हो।
जिसे आँधियाँ बुझा न पाएँ, कोई न जान सके।
आप अलौकिक दीपक ऐसे, 'जिन' को शीश झुके॥

ॐ ह्रीं त्रैलोक्यलोकवशकारक-क्लींमहाबीजाक्षरसम्पन्न श्रीवृषभजिनाय अर्घ्यं...।

१७. सर्वरोग निरोधक-सूर्य से भी अधिक महिमावन्त ज्ञान-भानु

नास्तं कदाचिदुपयासि न राहुगम्यः,
स्पष्टीकरोषि सहसा युगपज्- जगन्ति।

नाम्भोधरोदर - निरुद्ध - महा- प्रभावः,
सूर्यातिशायि-महिमासि मुनीन्द्र ! लोके॥

अस्त कभी ना होता जिसको, राहू डस न सके।
जिसके महा प्रभावों को भी, बादल ढँक न सके।
एक साथ त्रय जग दिखलाते, जग में हो कैसे?
अधिक सूर्य से महिमा वाले, हो मुनीन्द्र! ऐसे॥

ॐ ह्रीं पापान्धकारनिवारक-क्लींमहाबीजाक्षरसम्पन्न श्रीवृषभजिनाय अर्घ्यं...।

१८. शत्रु-सैन्य-स्तम्भक-अद्भुत मुखचन्द्र

नित्योदयं दलित - मोह - महान्धकारम्,
गम्यं न राहु - वदनस्य न वारिदानाम्।
विभ्राजते तव मुखाब्ज - मनल्पकान्ति,
विद्योतयज्-जगदपूर्व-शशाङ्क-बिम्बम्॥

महा मोह का अंध विनाशक, रहता उदित सदा।
कर न सके राहू भी कवलित, ढके न मेघ कदा।
कान्तिमान मुख-कमल आपका, जगत प्रकाशक जो।
है अपूर्व वह चन्द्रबिम्ब सा, सदा सुशोभित हो॥

ॐ ह्रीं चन्द्रवत्सर्वलोकोद्योतनकारक-क्लींमहाबीजाक्षरसम्पन्न-श्रीवृषभजिनाय अर्घ्यं...।

१९. उच्चाटनादि रोधक-सूर्य चन्द्र की अनुपयोगिता

किं शर्वरीषु शशिनाह्नि विवस्वता वा,
युष्मन्मुखेन्दु- दलितेषु तमः -सु नाथ!
निष्पन्न-शालि-वन-शालिनी जीव-लोके,
कार्यं कियज्जल-धरै-र्जल-भार-नम्रैः॥

जैसे भू पर खड़ी फसल का, पूरा काम हुआ।
जल से भरे झुके मेघों का, तब क्या अर्थ हुआ।
ऐसे ही मुखचन्द्र आपका, जब सब तम नाशे।
तो फिर दिन में सूर्य रात में, क्या हो चन्दा से ?॥

ॐ ह्रीं सकलकालुष्यदोषनिवारक-क्लींमहाबीजाक्षरसम्पन्न-श्रीवृषभजिनाय अर्घ्यं...।

२०. संतान-सम्पत्ति-सौभाग्यप्रसाधक-महामणियों जैसा ज्ञान

ज्ञानं यथा त्वयि विभाति कृतावकाशम्,
नैवं तथा हरि - हरादिषु नायकेषु।
तेजो महा मणिषु याति यथा महत्त्वम्,
नैवं तु काच -शकले किरणाकुलेऽपि॥

झिलमिल-झिलमिल मणियों में ज्यों, अतिशय चमक रही।
काँच खण्ड की किरणों में त्यों, चमचम दमक नहीं।
ऐसे अनन्तज्ञान आप में, हे प्रभु! शोभित हो।
वैसे तुम से पर देवों में, कभी न ज्योतित हो॥

ॐ ह्रीं केवलज्ञानप्रकाशक-लोकालोकस्वरूपी-क्लींमहाबीजाक्षरसम्पन्न श्रीवृषभ-जिनाय अर्घ्यं...।

२१. सर्वसौख्य-सौभाग्य-साधक-अलंकार पूर्वक स्तुति

मन्ये वरं हरि - हरा - दय एव दृष्टा,
दृष्टेषु येषु हृदयं त्वयि तोषमेति।
किं वीक्षितेन भवता भुवि येन नान्यः,
कश्चिन्मनो हरति नाथ ! भवान्तरेऽपि॥

पर देवों के दर्शन कर मैं, उनको श्रेष्ठ कहूँ।
जिन्हें देख बस नाथ आप में, मैं संतोष धरूँ।
प्रभु तेरा दर्शन यह मुझको, क्या-क्या लाभ करे ?
परभव में भी भू पर कोई, मेरा मन न हरे॥

ॐ ह्रीं सर्वदोषहर-शुभदर्शक-क्लींमहाबीजाक्षरसम्पन्न श्रीवृषभजिनाय अर्घ्यं...।

२२. भूत-पिशाचादि-बाधा निरोधक-अपूर्व माता

स्त्रीणां शतानि शतशो जनयन्ति पुत्रान्,
नान्या सुतं त्वदुपमं जननी प्रसूता।
सर्वा दिशो दधति भानि सहस्त्र-रश्मिम्,
प्राच्येव दिग् जनयति स्फुरदंशु-जालम् ॥

जगमग-जगमग तारा-गण तो, धारें सभी दिशा।
पर तेजस्वी सूरज तो बस, जन्मे पूर्व दिशा।

यूँ ही सौ-सौ सुत को जनती, सौ-सौ नारी माँ।
पर प्रभु सम अनुपम सुत जनती, कहीं न ऐसी माँ॥

ॐ ह्रीं अद्‌भुतगुणसंपन्न-क्लींमहाबीजाक्षरसम्पन्न श्रीवृषभजिनाय अर्घ्यं...।

२३. प्रेतबाधा निवारक-मोक्षमार्ग दर्शक

त्वामामनन्ति मुनयः परमं पुमांस-
मादित्य-वर्ण-ममलं तमसः पुरस्तात्।
त्वामेव सम्य - गुपलभ्य जयन्ति मृत्युम्,
नान्यः शिवः शिव-पदस्य मुनीन्द्र! पन्थाः॥

परमपुरुष तुमको मुनि मानें, निर्मल नेता हो।
सूरज जैसे आप सुनहरे, तिमिर विजेता हो।
बस तुमको ही सम्यक् पाकर, मृत्यु पर जय हो।
हे मुनीन्द्र! शिव मोक्ष मोक्षपथ, तुमसे अन्य न हो॥

ॐ ह्रीं सहस्त्रनामाधीश्वर-क्लींमहाबीजाक्षरसम्पन्न श्रीवृषभजिनाय अर्घ्यं...।

२४. शिरोरोग शामक-प्रभु के पर्यायवाची नाम

त्वा-मव्ययं विभु-मचिन्त्य-मसंख्य-माद्यम्,
ब्रह्माणमीश्वर - मनन्त - मनङ्ग - केतुम्।
योगीश्वरं विदित - योग-मनेक-मेकम्,
ज्ञान-स्वरूप-ममलं प्रवदन्ति संतः॥

अव्यय अचिन्त्य असंख्य विभु हो, आदिम ईश्वर हो।
अनन्त ब्रह्मा काम-केतु हो, तुम योगीश्वर हो।
विदित योग शुचि ज्ञान स्वरूपी, एक अनेक तुम्हीं।
संत जनों ने यथा आपकी, नामावली कही॥

ॐ ह्रीं मनोवांछितफलदायक-क्लींमहाबीजाक्षरसम्पन्न श्रीवृषभजिनाय अर्घ्यं...।

२५. दृष्टिदोष निरोधक-बुद्ध शिव शंकर आप ही हो

बुद्धस्त्वमेव विबुधार्चित - बुद्धि-बोधात्,
त्वं शङ्करोऽसि भुवन-त्रय- शङ्करत्वात् ।
धातासि धीर! शिव-मार्ग विधेर्विधानाद्,
व्यक्तं त्वमेव भगवन् पुरुषोत्तमोऽसि॥

सुर अर्चित हो केवलज्ञानी, अतः बुद्ध तुम हो।
त्रय जग को सुख देने वाले, सो शंकर तुम हो।
मोक्षमार्ग के आदि प्रवर्तक, धीर! विधाता हो।
तुम ही हो भगवन् पुरुषोत्तम, तुमरी जय-जय हो॥

ॐ ह्रीं षड्दर्शनपारंगत-क्लींमहाबीजाक्षरसम्पन्न श्रीवृषभजिनाय अर्घ्यं...।

२६. अर्धशिरः पीड़ा विनाशक-अतः आपको नमस्कार हो

तुभ्यं-नमस् - त्रिभुवनार्ति - हराय नाथ!
तुभ्यं-नमः क्षिति - तलामल - भूषणाय।
तुभ्यं - नमस् - त्रिजगतः परमेश्वराय,
तुभ्यं-नमो जिन! भवोदधि-शोषणाय॥

त्रिभुवन के दुख हर्त्ता प्रभु को, सदा नमोऽस्तु हो।
भू पर निर्मल भूषण प्रभु को, सदा नमोऽस्तु हो।
त्रय जग के परमेश्वर प्रभु को, सदा नमोऽस्तु हो।
भवसागर शोषक जिन प्रभु को, सदा नमोऽस्तु हो॥

ॐ ह्रीं नानादुःखविलीनक-क्लींमहाबीजाक्षरसम्पन्न श्रीवृषभजिनाय अर्घ्यं...।

२७. शत्रु-उन्मूलक-पूर्ण निर्दोष

को विस्मयोऽत्र यदि नाम गुणै-रशेषैस्-
त्वं संश्रितो निरवकाशतया मुनीश !
दोषै - रुपात्त - विविधाश्रय-जात-गर्वैः,
स्वप्नान्तरेऽपि न कदाचिद-पीक्षितोऽसि॥

सभी गुणों को इस जग में जब, आश्रय नहीं मिला।
इसमें क्या आश्चर्य आपका, आश्रय उन्हें मिला।
किन्तु घमण्डी सभी दोष जो, पर में खूब टिकें।
हे मुनीश! वे दोष आपमें, सपने में न दिखें॥

ॐ ह्रीं सकलदोषनिर्मुक्त-क्लींमहाबीजाक्षरसम्पन्न श्रीवृषभजिनाय अर्घ्यं...।

२८. सर्व-मनोरथ प्रपूरक-अशोकवृक्ष प्रातिहार्य

उच्चै - रशोक - तरु - संश्रितमुन्मयूख -
माभाति रूपममलं भवतो नितान्तम्।

स्पष्टोल्लसत्-किरण-मस्त-तमो-वितानम्,
बिम्बं रवेरिव पयोधर - पार्श्ववर्ति॥

जिसकी ऊपर उठती किरणें, अंध विनाशक जो।
बादल दल के निकट विराजित, जैसे सूरज हो।
निर्विकार हो सबसे सुन्दर, प्रभु तन ज्योतित हो।
उच्च अशोक वृक्ष के नीचे, खूब सुशोभित हो॥

ॐ ह्रीं अशोकतरु-प्रातिहार्ययुक्त-क्लींमहाबीजाक्षरसम्पन्न श्रीवृषभजिनाय अर्घ्यं...।

२९. नेत्रपीड़ा विनाशक-सिंहासन प्रातिहार्य

सिंहासने मणि - मयूख - शिखा-विचित्रे,
विभ्राजते तव वपुः कनकावदातम्।
बिम्बं वियद् - विलस - दंशुलता-वितानम्
तुङ्गोदयाद्रि - शिरसीव सहस्त्र-रश्मेः॥

मणि किरणों से रंग बिरंगा, सुन्दर सिंहासन।
उस पर सोने जैसे चमके, नाथ! आपका तन।
यों लगता ज्यों उदयाचल की, ऊँची शिखरों से।
नभ में पूरा हुआ प्रकाशित, सूर्य बिम्ब जैसे॥

ॐ ह्रीं मणिमुक्ताखचितसिंहासन-प्रातिहार्ययुक्त-क्लींमहाबीजाक्षरसम्पन्न श्रीवृषभजिनाय अर्घ्यं...।

३०. शत्रु-स्तम्भक-चँवर प्रातिहार्य

कुन्दावदात - चल - चामर-चारु-शोभम्,
विभ्राजते तव वपुः कलधौत - कान्तम्।
उद्यच्छशाङ्क - शुचिनिर्झर - वारि -धार-
मुच्चैस्तटं सुरगिरेरिव शातकौम्भम्॥

दोनों तरफ कुन्द पुष्पों सम, धवल चँवर ढुरते।
और बीच में स्वर्णिम तन सम, प्रभु शोभित रहते।
यों लगता जैसे सुरगिरि के, स्वर्णिम तट पर से।
चन्दा सम उज्ज्वल झरनों की, धाराएँ बरसें॥

ॐ ह्रीं चतुःषष्टिचामर-प्रातिहार्ययुक्त-क्लींमहाबीजाक्षरसम्पन्न-श्रीवृषभजिनाय अर्घ्यं...।

३१. राज्य-सम्मान दायक-छत्रत्रय प्रातिहार्य

छत्र - त्रयं तव विभाति शशाङ्क- कान्त-
मुच्चैः स्थितं स्थगित-भानु - कर - प्रतापम्।
मुक्ता-फल - प्रकर - जाल-विवृद्ध-शोभं,
प्रख्यापयत् - त्रिजगतः परमेश्वरत्वम्॥

रवि किरणों के ताप रोकने, उच्च अवस्थित हैं।
मुक्ता मणियों की लड़ियों से, सुन्दर निर्मित हैं।
चन्दा जैसे तीन छत्र जो, सबको भाते हैं।
त्रय जग के तुम परमेश्वर हो, यही बताते हैं॥

ॐ ह्रीं छत्रत्रय-प्रातिहार्ययुक्त-क्लींमहाबीजाक्षरसम्पन्न श्रीवृषभजिनाय अर्घ्यं...।

३२. संग्रहणी-संहारक-दुन्दुभि प्रातिहार्य

गम्भीर - तार - रव - पूरित - दिग्विभागस्-
त्रैलोक्य-लोक -शुभ - सङ्गम -भूति-दक्षः।
सद्धर्म - राज - जय-घोषण - घोषकः सन्,
खे दुन्दुभि - र्ध्वनति ते यशसः प्रवादी॥

जिसके गहरे उच्च स्वरों से, गुंजित दसों दिशा।
त्रय जग को सत्संग कराने, में जो निपुण रहा।
दुन्दुभि बाजा यथा आपका, नभ में गूँज रहा।
मृत्युराज पर धर्मराज की, जय को बता रहा॥

ॐ ह्रीं दुन्दुभि-प्रातिहार्ययुक्त-क्लींमहाबीजाक्षरसम्पन्न श्रीवृषभजिनाय अर्घ्यं...।

३३. सर्वज्वर संहारक-पुष्पवृष्टि प्रातिहार्य

मन्दार - सुन्दर - नमेरु - सुपारिजात-
संतानकादि - कुसुमोत्कर - वृष्टि-रुद्धा।
गन्धोद - बिन्दु- शुभ - मन्द - मरुत्प्रपाता,
दिव्या दिवः पतति ते वचसां ततिर्वा॥

पारिजात मन्दार नमेरू, संतानक आदि।
सुर पुष्पों के साथ सुगंधित, हों जल कण आदि।

मिश्रित नभ से मन्द-मन्द हो, दिव्य सुमन वर्षा।
यों लगती ज्यों जिनवर की हो, दिव्य वचन वर्षा॥

ॐ ह्रीं समस्तजातिपुष्पवृष्टि-प्रातिहार्ययुक्त-क्लींमहाबीजाक्षरसम्पन्न-श्रीवृषभजिनाय अर्घ्यं...।

३४. गर्भ-संरक्षक-भामण्डल प्रातिहार्य

शुम्भत्-प्रभा- वलय-भूरि-विभा-विभोस्ते,
लोक - त्रये - द्युतिमतां द्युति-माक्षिपन्ती।
प्रोद्यद्- दिवाकर-निरन्तर - भूरि -संख्या,
दीप्त्या जयत्यपि निशामपि-सोम-सौम्याम्॥

बहुत सूर्य हों उदित निरन्तर, जो उज्ज्वल चमके।
लेकिन चन्दा जैसा शीतल, जो सुन्दर दमके।
जो जीते त्रय जग के सुन्दर, सभी पदार्थों को।
यों उज्ज्वल भामण्डल तेरा, जीते रातों को॥

ॐ ह्रीं कोटिभास्करप्रभामण्डितभामण्डल-प्रातिहार्ययुक्त-क्लींमहाबीजाक्षर-सहित-श्रीवृषभजिनाय अर्घ्यं...।

३५. ईति-भीति निवारक-दिव्यध्वनि प्रातिहार्य

स्वर्गापवर्ग - गम - मार्ग - विमार्गणेष्टः,
सद्धर्म-तत्त्व-कथनैक - पटुस्-त्रिलोक्याः।
दिव्य- ध्वनि - र्भवति ते विशदार्थ-सर्व-
भाषा-स्वभाव-परिणाम-गुणैः प्रयोज्यः॥

स्वर्ग मोक्ष जाने वालों को, जो दे दिग्दर्शन।
सच्चा धर्म तत्त्व कहने में, त्रय जग में सक्षम।
सब भाषा में परिवर्तित हो, विशद अर्थ वाली।
यथा दिव्य ध्वनि नाथ! आपकी, ओम्-कार वाली॥

ॐ ह्रीं जलधरपटलगर्जित-सर्वभाषात्मकयोजनप्रमाण-दिव्यध्वनि-प्रातिहार्ययुक्त-क्लीं-महाबीजाक्षरसहित-श्रीवृषभजिनाय अर्घ्यं...।

३६. लक्ष्मीदायक-स्वर्ण कमलों की रचना

उन्निद्र - हेम - नव - पङ्कज - पुञ्ज-कान्ती,
पर्युल्-लसन् -नख-मयूख- शिखाभिरामौ।

पादौ पदानि तव यत्र जिनेन्द्र ! धत्तः,
पद्मानि तत्र विबुधाः परिकल्पयन्ति॥

नये सुनहरे कमलों जैसे, चमकदार जो हैं।
जिनके नख की किरण शिखाएँ, कान्त मनोहर हैं।
नाथ! आपके चरण-कमल यों, जहाँ आप धरते।
वहीं देवगण दिव्य कमल की, शुभ रचना करते॥

ॐ ह्रीं पादन्यासे-पद्मश्रीयुक्त-क्लींमहाबीजाक्षरसम्पन्न श्रीवृषभजिनाय अर्घ्यं...।

३७. दुष्टता प्रतिरोधक-अद्वितीय विभूति

इत्थं यथा तव विभूति - रभूज् - जिनेन्द्र !
धर्मोपदेशन - विधौ न तथा परस्य।
यादृक् - प्रभा दिनकृतः प्रहतान्धकारा,
तादृक् - कुतोग्रह - गणस्य विकासिनोऽपि॥

इस विधि दिव्य देशना वाला, अतिशय वैभव जो।
हे जिनवर! ज्यों हुआ आपका, नहीं अन्य का हो।
जैसे अंध विनाशक कान्ती, सूरज की होती।
वैसी झिलमिल तारेगण की, कैसे हो ज्योति?॥

ॐ ह्रीं धर्मोपदेशसमये-समवसरणादि-लक्ष्मीविभूति-विराजमान-क्लीं-महाबीजाक्षर-सहित-श्रीवृषभजिनाय अर्घ्यं...।

३८. वैभववर्धक-हस्ति भय निवारक भक्ति

श्च्यो-तन्-मदाविल-विलोल-कपोल मूल,
मत्त-भ्रमद् - भ्रमर - नाद - विवृद्ध-कोपम्।
ऐरावताभमिभ - मुद्धत - मापतन्तम्
दृष्ट्वा भयं भवति नो भवदाश्रितानाम्॥

मद से मटमैले गालों से, जब मद है झरता।
जिस पर भ्रमर गूँज से जिसका, क्रोध खूब बढ़ता।
ऐसा ऐरावत जिद्दी गज, जब आगे दिखता।
तो भी तेरे शरणागत को, कभी न डर लगता॥

ॐ ह्रीं हस्त्यादिसर्वदुर्द्धर-भयनिवारक-क्लींमहाबीजाक्षरसम्पन्न श्रीवृषभजिनाय अर्घ्यं...।

३९. सिंह-शक्ति संहारक-सिंह भय से मुक्त जिनेन्द्र भक्ति

भिन्नेभ-कुम्भ-गल - दुज्ज्वल-शोणिताक्त,
मुक्ता - फल - प्रकरभूषित - भूमि - भागः।
बद्ध - क्रमः क्रम-गतं हरिणाधिपोऽपि,
नाक्रामति क्रम - युगाचल-संश्रितं ते॥

जिसने गज के गंडस्थल को, चीर फाड़ डाले।
लाल-लाल गजमुक्ता भू पर, खूब बिछा डाले।
ऐसा सिंह भी निज पंजों से, उनको क्या मारे?
जिसने जिनवर के चरणों का, लिया सहारा रे ॥

ॐ ह्रीं युगादिदेवनामप्रसादात् केशरिभयविनाशक-क्लींमहाबीजाक्षर-सहित-श्रीवृषभ-जिनाय अर्घ्यं...।

४०. सर्वाग्नि-शामक-नाम स्मरण से दावानल शमन

कल्पान्त-काल - पवनोद्धत - वह्नि -कल्पं,
दावानलं ज्वलित - मुज्ज्वल-मुत्स्फुलिङ्गम्।
विश्वं जिघत्सुमिव सम्मुख - मापतन्तं,
त्वन्नाम -कीर्तन - जलं शमयत्यशेषम्॥

अंगारों की चिनगारी जो, उज्ज्वल धधक रही।
प्रलयकाल की तेज पवन से, तो जो भड़क रही।
ऐसी वह वन आग सभी को, जो खाने आए।
उसे आपका प्रभु-कीर्तन जल, शीघ्र बुझा जाए॥

ॐ ह्रीं संसाराग्नितापनिवारक-क्लींमहाबीजाक्षरसम्पन्न श्रीवृषभजिनाय अर्घ्यं...।

४१. सर्पभय भंजक-भुजंग भयहारी नाम नागदमनी

रक्तेक्षणं समद - कोकिल - कण्ठ-नीलम्,
क्रोधोद्धतं फणिन - मुत्फण - मापतन्तम्।
आक्रामति क्रम - युगेण निरस्त - शङ्कस्-
त्वन्नाम - नाग दमनी हृदि यस्य पुंसः॥

मतवाली कोयल के कंठों, जैसा हो काला।
क्रोधित उठे हुए फन वाला, लाल नयन वाला।

ऐसा नाग लांघ जाते वे, पग से निर्भय हो।
प्रभु की नाम नाग-दमनी को, रखें हृदय में जो॥

ॐ ह्रीं त्वन्नामनागदमनीशक्तिसंपन्न-क्लींमहाबीजाक्षरसहित-श्रीवृषभ- जिनाय अर्घ्यं...।

४२. युद्धभय विध्वंसक-संग्रामभय विनाशक जिन-कीर्तन

वल्गत् - तुरङ्ग - गज - गर्जित - भीमनाद,
माजौ बलं बलवता - मपि - भूपतीनाम्।
उद्यद् - दिवाकर - मयूख - शिखापविद्धम्
त्वत्कीर्तनात्तम - इवाशु भिदामुपैति॥

जहाँ हिनहिनाहट घोड़ों की, गज की चिंघाड़ें।
यों रणक्षेत्र जहाँ बलशाली, शत्रु ललकारें।
वहाँ आपके बस कीर्तन से, कष्ट टलें ऐसे।
उगते सूर्य किरण से जल्दी, अंध नशे जैसे॥

ॐ ह्रीं संग्राममध्ये-क्षेमङ्कर-क्लींमहाबीजाक्षरसम्पन्न श्रीवृषभजिनाय अर्घ्यं...।

४३. सर्व शान्तिदायक-शरणागत की युद्ध में विजय

कुन्ताग्र-भिन्न - गज - शोणित - वारिवाह,
वेगावतार - तरणातुर - योध - भीमे।
युद्धे जयं विजित-दुर्जय - जेय - पक्षास्-
त्वत्पाद-पङ्कज-वनाश्रयिणो लभन्ते॥

योद्धाओं ने भालों द्वारा, फाड़ दिए हाथी।
रक्त वेग में आने-जाने, को आतुर साथी।
ऐसे क्रूर युद्ध में जो जन, तेरा आश्रय लें।
वे अपराजित दुश्मन पर भी, तुरत विजय पा लें॥

ॐ ह्रीं वनगजादिभयनिवारक-क्लींमहाबीजाक्षरसम्पन्न श्रीवृषभजिनाय अर्घ्यं...।

४४. सर्वापत्ति विनाशक-नाम स्मरण से निर्विघ्न समुद्र यात्रा

अम्भोनिधौ क्षुभित - भीषण - नक्र - चक्र-
पाठीन - पीठ-भय-दोल्वण - वाडवाग्नौ।
रङ्गत्तरङ्ग - शिखर - स्थित - यान-पात्रास्-
त्रासं विहाय भवतः स्मरणाद्-व्रजन्ति॥

जहाँ भयंकर बड़वानल हों, मगरमच्छ भी हों।
बहुत बड़ी पाठीन मीन से, सागर कंपित हों।
जहाँ फँसे जलयान तरंगित, जिनके हो जाते।
वहीं आपके बस सुमरन से, अभय लक्ष्य पाते॥

ॐ ह्रीं संसाराब्धितारक-क्लींमहाबीजाक्षरसम्पन्न श्रीवृषभजिनाय अर्घ्यं...।

४५. जलोदरादिरोग एवं सर्वापत्ति संहारक-व्याधि विनाशक चरणरज

उद्भूत - भीषण - जलोदर - भार - भुग्नाः,
शोच्यां दशा-मुप गताश्-च्युत-जीविताशाः।
त्वत्पाद-पङ्कज - रजो - मृत - दिग्ध - देहाः,
मर्त्या भवन्ति मकर-ध्वज-तुल्यरूपाः॥

हुआ भयंकर रोग जलोदर, जिससे कमर झुकी।
करुण दशा से जीवन आशा, जिनकी बिखर चुकी।
ऐसे मानव नाथ! आपकी, चरणामृत पाके।
कामदेव सम रोग मुक्त हों, सुन्दर बन जाते॥

ॐ ह्रीं दाहतापजलोदराष्ट-दशकुष्टसन्निपातादिरोगहारक-क्लींमहाबीजाक्षर-सहित-श्रीवृषभजिनाय अर्घ्यं...।

४६. बन्धन विमोचक-नाम जाप से बन्धन मुक्ति

आपाद - कण्ठमुरु - शृङ्खल - वेष्टिताङ्गा,
गाढं-बृहन्-निगड-कोटि निघृष्ट - जङ्घाः।
त्वन् - नाम - मंत्र - मनिशं मनुजाः स्मरन्तः,
सद्यः स्वयं विगत-बन्ध-भया भवन्ति॥

बड़ी-बड़ी साँकल के द्वारा, बाँधा बहुत कड़ा।
पैरों से सम्पूर्ण कंठ तक, तन जिनका जकड़ा।
महाबेड़ियों से घिर करके, जिनके पाँव छिले।
तेरे नाम मंत्र से उनके, भय के बन्ध टले॥

ॐ ह्रीं नानाविधकठिनबन्धन-दूरकारक-क्लींमहाबीजाक्षरसम्पन्न-श्रीवृषभजिनाय अर्घ्यं...।

४७. अस्त्र शस्त्रादि शक्ति निरोधक-सम्पूर्णभय निवारक जिन स्तवन

मत्त-द्विपेन्द्र - मृग - राज - दवानलाहि-

संग्राम - वारिधि - महोदर - बन्ध -नोत्थम्।
तस्याशु नाश - मुप - याति भयं-भियेव,
यस्तावकं स्तव-मिमं मतिमान-धीते॥

जो ज्ञानी जन इस संस्तव को, भक्ति सहित पढ़ता।
उसे शेर पागल हाथी का, कभी न भय रहता।
युद्ध जलोदर सागर बन्धन, दावानल का भय।
बाल न बाँका उनका करले, उनकी होवे जय॥

ॐ ह्रीं बहुविधविघ्नविनाशक-क्लींमहाबीजाक्षरसम्पन्न श्रीवृषभजिनाय अर्घ्यं...।

४८. सर्व-सिद्धिदायक-स्तुति का फल

स्तोत्र-स्त्रजं तव जिनेन्द्र गुणैर्निबद्धाम्,
भक्त्या मया रुचिर-वर्ण-विचित्र-पुष्पाम्।
धत्ते जनो य इह कण्ठ - गता- मजस्त्रम्,
तं मानतुङ्ग-मवशा-समुपैति लक्ष्मीः॥

मैंने यह जो भक्ति-भाव से, गुण तेरे चुनके।
बहुरंगी पुष्पों की माला, गूँथी है बुनके।
इस संस्तव माला को जो नित, अपने कंठ धरे।
हे जिनवर! वह 'मानतुंग' सम, लक्ष्मी अवश वरे॥

ॐ ह्रीं सकलकार्यसाधनसमर्थ-क्लींमहाबीजाक्षरसम्पन्न श्रीवृषभजिनाय अर्घ्यं...।

पूर्णार्घ्य (मात्रिक सवैया)

लाखों और करोड़ों मुख से, कर न सकेंगे हम गुणगान।
बिना आपके आ न सकेंगे, जहाँ विराजे हो भगवान्॥
परेशानियाँ लाभ-हानियाँ, प्रभू कृपा से हों आसान।
अतः हाथ सिर पर रख दो तो, हम बन जाएंगे भगवान॥
केवल कृपा आपकी पाने, अड़तालीस चढ़ाए अर्घ्य।
फिर भी मन में तृप्ति नहीं तो, हम ले आए हैं पूर्णार्घ्य॥
अर्घ्य चढ़ाकर भाव बनाए, संकट में ना हों हैरान।
आतम परमातम की श्रद्धा, मिले आप से बस भगवान्॥

ॐ ह्रीं अष्टचत्वारिंशद्दलकमलाधिपति-क्लींमहाबीजाक्षरसम्पन्न-श्रीवृषभजिनाय पूर्णार्घ्यं...।

(यदि अनुकूलता हो तो ऋद्धि मंत्र के अर्घ्य भी चढ़ा सकते हैं)

ऋद्धि-मंत्रों के अर्घ्य

१. ॐ ह्रीं अर्हं णमो जिणाणं झ्रौं झ्रौं नमः अर्घ्यं...।
२. ॐ ह्रीं अर्हं णमो ओहिजिणाणं झ्रौं झ्रौं नमः अर्घ्यं...।
३. ॐ ह्रीं अर्हं णमो परमोहिजिणाणं झ्रौं झ्रौं नमः अर्घ्यं...।
४. ॐ ह्रीं अर्हं णमो सव्वोहिजिणाणं झ्रौं झ्रौं नमः अर्घ्यं...।
५. ॐ ह्रीं अर्हं णमो अणंतोहिजिणाणं झ्रौं झ्रौं नमः अर्घ्यं...।
६. ॐ ह्रीं अर्हं णमो कोट्ठबुद्धीणं झ्रौं झ्रौं नमः अर्घ्यं...।
७. ॐ ह्रीं अर्हं णमो बीजबुद्धीणं झ्रौं झ्रौं नमः अर्घ्यं...।
८. ॐ ह्रीं अर्हं णमो पदाणुसारीणं झ्रौं झ्रौं नमः अर्घ्यं...।
९. ॐ ह्रीं अर्हं णमो सभिण्णसोदाराणं झ्रौं झ्रौं नमः अर्घ्यं...।
१०. ॐ ह्रीं अर्हं णमो सयंबुद्धाणं झ्रौं झ्रौं नमः अर्घ्यं...।
११. ॐ ह्रीं अर्हं णमो पत्तेयबुद्धाणं झ्रौं झ्रौं नमः अर्घ्यं...।
१२. ॐ ह्रीं अर्हं णमो बोहियबुद्धाणं झ्रौं झ्रौं नमः अर्घ्यं...।
१३. ॐ ह्रीं अर्हं णमो उजुमदीणं झ्रौं झ्रौं नमः अर्घ्यं...।
१४. ॐ ह्रीं अर्हं णमो विउलमदीणं झ्रौं झ्रौं नमः अर्घ्यं...।
१५. ॐ ह्रीं अर्हं णमो दसपुव्वीणं झ्रौं झ्रौं नमः अर्घ्यं...।
१६. ॐ ह्रीं अर्हं णमो चउदसपुव्वीणं झ्रौं झ्रौं नमः अर्घ्यं...।
१७. ॐ ह्रीं अर्हं णमो अट्ठंगमहानिमित्तकुसलाणं झ्रौं झ्रौं नमः अर्घ्यं...।
१८. ॐ ह्रीं अर्हं णमो विउव्वइड्ढिपत्ताणं झ्रौं झ्रौं नमः अर्घ्यं...।
१९. ॐ ह्रीं अर्हं णमो विज्जाहराणं झ्रौं झ्रौं नमः अर्घ्यं...।
२०. ॐ ह्रीं अर्हं णमो चारणाणं झ्रौं झ्रौं नमः अर्घ्यं...।
२१. ॐ ह्रीं अर्हं णमो पण्णसमणाणं झ्रौं झ्रौं नमः अर्घ्यं...।
२२. ॐ ह्रीं अर्हं णमो आगासगामीणं झ्रौं झ्रौं नमः अर्घ्यं...।
२३. ॐ ह्रीं अर्हं णमो असीविसाणं झ्रौं झ्रौं नमः अर्घ्यं...।
२४. ॐ ह्रीं अर्हं णमो दिट्ठिविसाणं झ्रौं झ्रौं नमः अर्घ्यं...।
२५. ॐ ह्रीं अर्हं णमो उग्गतवाणं झ्रौं झ्रौं नमः अर्घ्यं...।
२६. ॐ ह्रीं अर्हं णमो दित्ततवाणं झ्रौं झ्रौं नमः अर्घ्यं...।
२७. ॐ ह्रीं अर्हं णमो तत्ततवाणं झ्रौं झ्रौं नमः अर्घ्यं...।
२८. ॐ ह्रीं अर्हं णमो महातवाणं झ्रौं झ्रौं नमः अर्घ्यं...।
२९. ॐ ह्रीं अर्हं णमो घोरतवाणं झ्रौं झ्रौं नमः अर्घ्यं...।
३०. ॐ ह्रीं अर्हं णमो घोरगुणाणं झ्रौं झ्रौं नमः अर्घ्यं...।

३१. ॐ ह्रीं अर्हं णमो घोरपरक्कमाणं झ्रौं झ्रौं नमः अर्घ्यं...।
३२. ॐ ह्रीं अर्हं णमो घोरगुणबंभचारीणं झ्रौं झ्रौं नमः अर्घ्यं...।
३३. ॐ ह्रीं अर्हं णमो आमोसहिपत्ताणं झ्रौं झ्रौं नमः अर्घ्यं...।
३४. ॐ ह्रीं अर्हं णमो खेल्लोसहिपत्ताणं झ्रौं झ्रौं नमः अर्घ्यं...।
३५. ॐ ह्रीं अर्हं णमो जल्लोसहिपत्ताणं झ्रौं झ्रौं नमः अर्घ्यं...।
३६. ॐ ह्रीं अर्हं णमो विप्पोसहिपत्ताणं झ्रौं झ्रौं नमः अर्घ्यं...।
३७. ॐ ह्रीं अर्हं णमो सव्वोसहिपत्ताणं झ्रौं झ्रौं नमः अर्घ्यं...।
३८. ॐ ह्रीं अर्हं णमो मणबलीणं झ्रौं झ्रौं नमः अर्घ्यं...।
३९. ॐ ह्रीं अर्हं णमो वचबलीणं झ्रौं झ्रौं नमः अर्घ्यं...।
४०. ॐ ह्रीं अर्हं णमो कायबलीणं झ्रौं झ्रौं नमः अर्घ्यं...।
४१. ॐ ह्रीं अर्हं णमो खीरसवीणं झ्रौं झ्रौं नमः अर्घ्यं...।
४२. ॐ ह्रीं अर्हं णमो सप्पिसवीणं झ्रौं झ्रौं नमः अर्घ्यं...।
४३. ॐ ह्रीं अर्हं णमो महुरसवीणं झ्रौं झ्रौं नमः अर्घ्यं...।
४४. ॐ ह्रीं अर्हं णमो अमियसवीणं झ्रौं झ्रौं नमः अर्घ्यं...।
४५. ॐ ह्रीं अर्हं णमो अक्खीणमहाणसाणं झ्रौं झ्रौं नमः अर्घ्यं...।
४६. ॐ ह्रीं अर्हं णमो वड्ढमाणाणं झ्रौं झ्रौं नमः अर्घ्यं...।
४७. ॐ ह्रीं अर्हं णमो सव्वसिद्धायदणाणं झ्रौं झ्रौं नमः अर्घ्यं...।
४८. ॐ ह्रीं अर्हं णमो लोये सव्वसाहूणं झ्रौं झ्रौं नमः अर्घ्यं...।

जाप्य मंत्र : ॐ ह्रीं श्रीं क्लीं अर्हं श्रीवृषभनाथ-जिनेन्द्राय नमो नमः।

जयमाला

(दोहा)

मानतुंग सी बेड़ियाँ, वृषभनाथ से कर्म।
भक्त तोड़ने को धरें, जयमाला का धर्म॥

(ज्ञानोदय)

हमको पंचमकाल मिला तो, चौबीसी तो मिल न सकी।
लेकिन उनके बिम्ब पूजकर, भक्ति भावना जाग उठी॥
उनमें प्रथम वृषभ तीर्थंकर, जन्म अयोध्या में धारे।
तत्त्वज्ञान दे अष्टापद से, मोक्ष पधारे प्रभु प्यारे॥१॥
अतः भरत भारत में शासन, आदिवीर का चलता है।
तत्त्व विरोधी इंसानों को, सही धर्म यह खलता है॥
तभी धर्म धर्मात्मा-जन को, उपसर्गों के शूल मिलें।

पर उसका हो बाल न बाँका, जिसे आदि की धूल मिले॥२॥
ऐसी एक घटी दुर्घटना, जो श्रद्धा मजबूत करे।
जिनशासन का मर्म समझने, हर मत को मजबूर करे॥
राजा भोज बड़ा ज्ञानी था, धर्मालू श्रद्धालू था।
किन्तु एक मंत्री था उसका, जो मानी ईर्ष्यालू था॥३॥
जिनशासन का कट्टर दुश्मन, सबको जिसने भड़काया।
तभी धनंजय कवि की रचना, चुरा 'नाममाला' लाया॥
जिसके कारण कालीदास के, विचलन में न हुई देरी।
रचनाओं को जैन चुराते, नाममाला तो है मेरी॥४॥
बुला धनंजय को ये पूछा, ये रचना क्या तेरी है।
कालीदास कहते यह मेरी, कहें धनंजय मेरी है॥
यह रचना सचमुच किसकी है, यह निर्णय तो मुश्किल था।
जिसे याद हो उसकी है यह, राजा का ऐसा हल था॥५॥
कालीदास तो सुना न पाए, कही धनंजय ने पूरी।
सब समझे पर कुछ न बोले, थी राजा की मजबूरी॥
करके याद सुनाने से क्या, उनकी हो जाती रचना।
कालीदास भड़ककर बोले, यह तो मेरी है रचना॥६॥
ऐसे ही जैनों के मुनि भी, रचना खूब चुराते हैं।
अगर परीक्षा करनी तो मुनि, मानतुंग को लाते हैं॥
जिनको लाने पहुँचे तो वो, आने को तैयार न थे।
जिनशासन की शान घटाने, समझौते स्वीकार न थे॥७॥
तब राजा ने क्रोधित होकर, जंजीरों से बँधवाकर।
अड़तालिस दरवाजे वाले, कारागृह में डलवाकर॥
बड़े-बड़े ताले डलवाये, पहरा खूब लगाया था।
मानतुंग मुनिवर को सबने, झुकने को धमकाया था॥८॥
झुके न टूटे न घबराए, ना ही आतम ध्यान किया।
लेकिन वृषभनाथ स्वामी का, भक्तामर ये गान किया॥
ज्यों पद बने खुले त्यों ताले, सब जंजीरें टूट चुकीं।
देख जेल के बाहर मुनि को, प्रजा शर्म से झुकी-झुकी॥९॥
क्रमशः तीन बार मुनिवर को, कारागृह में डलवाए।

लेकिन सुबह देखकर बाहर, राज-प्रजा कवि घबराए॥
इस घटना की खबर हुई तो, लगी गूँजने जय-जयकार।
थे शर्मिंदा राज-प्रजा कवि, खूब हुई फिर हाहाकार॥१०॥
क्षमा याचना कर राजा ने, खुद को दोषी ठहराया।
क्षमा दान कर सबको मुनि ने, जैन धर्म को चमकाया॥
भक्तामर स्तोत्र की रचना, दुनियाँ में विख्यात हुई।
वृषभनाथ से मानतुंग की, जग में नई प्रभात हुई॥११॥
चाहे ब्राह्मी सुन्दरी हो या, सोमा सीता रानी हो।
चाहे भरत बाहुबलि हों या, वादिराज सम ज्ञानी हो॥
जो भी तुम्हें पुकारे उसकी, हरो सभी दुख जंजीरें।
वृषभनाथ सम वो प्रकटा ले, निज में जिन की तस्वीरें॥१२॥
अतः बुजुर्गों ने बनवाए, वृषभनाथ के मंदिर हैं।
तभी अयोध्या अष्टापद से, भक्तों के मन मंदिर हैं॥
नजर-नजर में डगर-डगर में, वृषभनाथ के अतिशय हों।
भले जमाना दुश्मन हो पर, जिन भक्तों की ही जय हो॥१३॥
पूरव पश्चिम उत्तर दक्षिण, विजय पताका उड़ती है।
कुण्डलपुर के बाबा जैसी, सबमें भक्ति उमड़ती है॥
यदि मुनि 'सुव्रत' मानतुंग सम, भक्तामर का पाठ करें।
मिटें रोग सब हटें उपद्रव, जिनशासन के ठाठ बढ़ें॥१४॥

(सोरठा)

भुक्ति मुक्ति की राह, वृषभनाथ की भक्ति है।
सो नमोऽस्तु की चाह, रखते जब तक शक्ति है॥

ॐ ह्रीं श्रीं क्लीं सर्वकर्मविनाशनाय आगतविघ्नभयनिवारणाय श्रीवृषभजिनाय अनर्घपद-प्राप्तये समुच्चय-जयमाला पूर्णार्घ्यं...।

(दोहा)

वृषभनाथ स्वामी करें, विश्वशान्ति कल्याण।
प्रासुक जल की धार दे, हम पूजत भगवान्॥

(शान्तये शान्तिधारा)

कल्पवृक्ष के पुष्प सम, पुष्पांजलि पद लाए।
भव दुःखों को मेंट दो, वृषभनाथ जिनराय॥

(पुष्पांजलिं...)

===

श्री कल्याणमंदिर विधान

६वीं शताब्दी में आचार्य कुमुदचन्द्र अपरनाम सिद्धसेन द्वारा पार्श्वनाथ भगवान् की भक्ति में रची गई यह काव्य रचना है। इसमें कुल ४४ काव्य हैं, जिसमें से ४३ काव्य वसंततिलका छन्द में रचे गए हैं तथा अंतिम ४४ काव्य आर्या छन्द में रचा गया है। यह स्तोत्र अत्यन्त सरल और भावमय है, प्रत्येक पद्य में भक्तिरस निस्यूत होता है।

स्थापना

(हरिगीतिका)

कल्याणमंदिर को नमन कर, पार्श्वप्रभु को पूज लें।
दुख संकटों को दूर करके, चेतना सुख खोज लें॥
इस भाव से हम द्रव्य लेकर, पूरते रंगोलियाँ।
यदि आप के चरणा पड़ें तो, हों दिवाली होलियाँ॥

(दोहा)

पार्श्वनाथ भगवान को, मन मंदिर में धार।
पूजन के पहले करें, नमोऽस्तु बारम्बार॥

ॐ ह्रीं श्रीं क्लींमहाबीजाक्षरसम्पन्न श्रीपार्श्वनाथजिनेन्द्र! अत्र अवतर अवतर...। अत्र तिष्ठ तिष्ठ ठः ठः...। अत्र मम सन्निहितो भव भव वषट्...। (पुष्पांजलिं...)

कल्याणमंदिर का सरस जल, जन्म मृत्यु दुख हरे।
जिनभक्ति की महिमा दिखाकर, चेतना में सुख भरे॥
चैतन्य जल की प्राप्ति हेतु, भेंट जल हम कर रहे।
कल्याणमंदिर को नमोऽस्तु, पार्श्वप्रभु को भज रहे॥

ॐ ह्रीं श्रीं क्लींमहाबीजाक्षरसम्पन्न श्रीपार्श्वनाथ-जिनेन्द्राय जन्म-जरा-मृत्युविनाशनाय जलं...।

कल्याणमंदिर से मिलेगी, छाँव पारसनाथ की।
जिससे मिलेगी शान्ति निज की, फिक्र फिर किस बात की॥
संसार का संग्राम तजने, भेंट चंदन कर रहे।
कल्याणमंदिर को नमोऽस्तु, पार्श्वप्रभु को भज रहे॥

ॐ ह्रीं श्रीं क्लींमहाबीजाक्षरसम्पन्न श्रीपार्श्वनाथ-जिनेन्द्राय संसारताप-विनाशनाय चंदनं...।

कल्याणमंदिर से रुकेगी, दुखद यात्रा मोह की।
विश्राम आतम को मिलेगा, प्राप्ति होगी मोक्ष की॥
अब कमठ जैसी भूल तजने, भेंट अक्षत कर रहे।
कल्याणमंदिर को नमोऽस्तु, पार्श्वप्रभु को भज रहे॥

ॐ ह्रीं श्रीं क्लींमहाबीजाक्षरसम्पन्न श्रीपार्श्वनाथ-जिनेन्द्राय-अक्षयपदप्राप्तये अक्षतान्...।

कल्याणमंदिर काव्य माला, गूँथना जो सीख ले।
खुद भेंट हों प्रभु चरण में तो, पुष्प आतम का खिले॥
इस काम का आतंक तजने, पुष्प अर्पित कर रहे।
कल्याणमंदिर को नमोऽस्तु, पार्श्वप्रभु को भज रहे॥

ॐ ह्रीं श्रीं क्लींमहाबीजाक्षरसम्पन्न श्रीपार्श्वनाथ-जिनेन्द्राय कामबाण-विध्वंसनाय पुष्पाणि...।

कल्याणमंदिर के पदों की, चार पंक्ति जो पढ़ें।
वे चार अंगुल रूप रसना, पर विजय निश्चित करें॥
अध्यात्म का रस लें अतः, नैवेद्य अर्पित कर रहे।
कल्याणमंदिर को नमोऽस्तु, पार्श्वप्रभु को भज रहे॥

ॐ ह्रीं श्रीं क्लींमहाबीजाक्षरसम्पन्न श्रीपार्श्वनाथ-जिनेन्द्राय क्षुधारोग-विनाशनाय नैवेद्यं...।

कल्याणमंदिर की करें जो, आरती दीपक जला।
दुख संकटों पर कर विजय वो, विश्व का करते भला॥
प्रभु पार्श्व जैसे पथ चुनें सो, दीप अर्पित कर रहे।
कल्याणमंदिर को नमोऽस्तु, पार्श्वप्रभु को भज रहे॥

ॐ ह्रीं श्रीं क्लींमहाबीजाक्षरसम्पन्न श्रीपार्श्वनाथ-जिनेन्द्राय मोहान्धकार-विनाशनाय दीपं...।

कल्याणमंदिर की सुगन्धी, हर दिशा महका रही।
जो भव भवों की कर्म कड़ियाँ, पार्श्व सम चटका रहीं॥
इस कर्म के हर खेल तजने, धूप अर्पित कर रहे।
कल्याणमंदिर को नमोऽस्तु, पार्श्वप्रभु को भज रहे॥

ॐ ह्रीं श्रीं क्लींमहाबीजाक्षरसम्पन्न श्रीपार्श्वनाथ-जिनेन्द्राय अष्टकर्मदहनाय धूपं...।

कल्याणमंदिर से खुलेंगीं, सफलता की खिड़कियाँ।
विश्वास अपना कह रहा कि, प्राप्त होंगी मुक्तियाँ॥
फल पाप का हम त्याग लें सो, फल समर्पित कर रहे।
कल्याणमंदिर को नमोऽस्तु, पार्श्वप्रभु को भज रहे॥

ॐ ह्रीं श्रीं क्लींमहाबीजाक्षरसम्पन्न श्रीपार्श्वनाथ-जिनेन्द्राय मोक्षफलप्राप्तये फलं...।

कल्याणमंदिर का हवन कर, होम जो भी कर रहे।
जप मंत्र माला के सहारे, पार्श्व प्रभु वो भज रहे॥
हम पार्श्व प्रभु सम पूज्य बनने, अर्घ्य अर्पित कर रहे।
कल्याणमंदिर को नमोऽस्तु, पार्श्वप्रभु को भज रहे॥

ॐ ह्रीं श्रीं क्लींमहाबीजाक्षरसम्पन्न श्रीपार्श्वनाथ-जिनेन्द्राय अनर्घपदप्राप्तये अर्घ्यं...।

पंचकल्याणक अर्घ्य

(दोहा)

दूज कृष्ण वैशाख को, तजकर प्राणत स्वर्ग।
नमोऽस्तु पार्श्व प्रभु जो वसे, वामा माँ के गर्भ॥

ॐ ह्रीं वैशाखकृष्णद्वितीयायां गर्भमङ्गलमण्डिताय श्रीपार्श्वनाथजिनेन्द्राय अर्घ्यं...।

पौष कृष्ण ग्यारस तिथि, जन्मे पार्श्वकुमार।
विश्वसेन काशी करे, नाँच-नाँच त्यौहार॥

ॐ ह्रीं पौषकृष्ण-एकादश्यां जन्ममङ्गलमण्डिताय श्रीपार्श्वनाथजिनेन्द्राय अर्घ्यं...।

पौष कृष्ण एकादशी, पार्श्व बने निर्ग्रन्थ।
तप कल्याणक हम भजें, हो नमोऽस्तु जयवंत॥

ॐ ह्रीं पौषकृष्ण-एकादश्यां तपोमङ्गलमण्डिताय श्रीपार्श्वनाथजिनेन्द्राय अर्घ्यं...।

कृष्ण चतुर्थी चैत्र को, जीते सब उपसर्ग।
पार्श्व प्रभु को नमोऽस्तु कर, करें ज्ञान का पर्व॥

ॐ ह्रीं चैत्रकृष्णचतुर्थ्यां ज्ञानमङ्गलमण्डिताय श्रीपार्श्वनाथजिनेन्द्राय अर्घ्यं..।

श्रावण शुक्ला सप्तमी, मोक्ष सप्तमी पर्व।
नमोऽस्तु पार्श्व निर्वाण को, भजें शिखरजी सर्व॥

ॐ ह्रीं श्रावणशुक्लसप्तम्यां मोक्षमङ्गलमण्डिताय श्रीपार्श्वनाथजिनेन्द्राय अर्घ्यं...।

अर्घ्यावली

१. अभय प्रदायी स्तुति

(वसंततिलका)

कल्याणमन्दिर मुदार मवद्य-भेदि
भीताभय प्रद-मनिन्दित मङ्घ्रि-पद्मम्।
संसार-सागर निमज्ज दशेष-जन्तु
पोतायमान मभिनम्य जिनेश्वरस्य॥

(मात्रिक सवैया/आल्हा)

जो कल्याणों के मंदिर हैं, पापों के भी नाशनहार।
भयभीतों को अभय दान दें, रहें अनिंदित बड़े उदार॥
भवसागर में गिरते जन को, जो जिनेन्द्र बन रहे जहाज।
जिनके चरण कमल को भजकर, सादर करूँ नमोऽस्तु आज॥

ॐ ह्रीं भव-समुद्रपतज्जन्तु-तारणाय क्लींमहाबीजाक्षरसहित श्री पार्श्व-नाथजिनेन्द्राय अर्घ्यं...।

२. सिद्धिदायक स्तुति

यस्य स्वयं सुरगुरु र्गरिमाम्बुराशेः
स्तोत्रं सुविस्तृत-मतिर्न विभुर्विधातुम्।
तीर्थेश्वरस्य कमठस्मय धूमकेतोस्
तस्याहमेष किल संस्तवनं करिष्ये॥

जो खुद गरिमा के सागर हैं, तीर्थंकर जो रहे महान।
धूम केतु सम कमठ-मान का, मिटा दिया था नाम निशान॥
विशाल मति वाला सुरगुरु भी, कर न सका जिनका गुणगान।
अल्प बुद्धि वाला होकर भी, करूँ उन्हीं का आज बखान॥

ॐ ह्रीं अनन्त गुणाय क्लींमहाबीजाक्षरसम्पन्न श्रीपार्श्वनाथ-जिनेन्द्राय अर्घ्यं...।

३. असमर्थ को समर्थ करने की शक्ति प्रदायी स्तुति

सामान्यतोऽपि तव वर्णयितुं स्वरूप-
मस्मादृशाः कथमधीश! भवन्त्यधीशाः।
धृष्टोऽपि कौशिक-शिशुर्यदि वा दिवान्धो
रूपं प्ररूपयति किं किल घर्मरश्मेः॥

नाथ! आपका स्वरूप कैसा, कितना सुन्दर बोले कौन।
मुझ सा वह सामान्य रूप से, कह न सके धर सके न मौन॥

ज्यों उल्लू का बच्चा दिन में, होकर भी अंधा भयभीत।
होकर जिद्दी क्या नहिं गाए, सुन्दर सूर्य रूप के गीत॥

ॐ ह्रीं चिद्रूपाय क्लींमहाबीजाक्षरसम्पन्न श्रीपार्श्वनाथ-जिनेन्द्राय अर्घ्यं...।

४. अतिगहन आत्म गुणों की प्राप्तिदायक स्तुति

मोहक्षयादनु-भवन्नपि नाथ! मर्त्यो
नूनं गुणान् गणयितुं न तव क्षमेत।
कल्पान्त-वान्त-पयसः प्रकटोऽपि यस्मान्-
मीयेत केन जलधेर्ननु रत्नराशिः॥

मोह नष्ट कर देव आपने, गुण भोगे जो अपरम्पार।
कौन माई का लाल जगत में, उनको गिनने करे विचार॥
प्रलयकाल में सागर का जल, जब हो जाता सीमा पार।
तो भी रत्न राशि को गिनने, कौन समर्थ यहाँ सरकार॥

ॐ ह्रीं गहन-गुणाय क्लींमहाबीजाक्षरसम्पन्न श्रीपार्श्वनाथ-जिनेन्द्राय अर्घ्यं...।

५. उत्कृष्ट पद प्रदायी स्तुति

अभ्युद्यतोऽस्मि तव नाथ! जडाशयोऽपि
कर्तुं स्तवं लसदसंख्य-गुणाकरस्य।
बालोऽपि किं न निज बाहु-युगं वितत्य
विस्तीर्णतां कथयति स्वधियाम्बुराशेः॥

जड़मति मैं भी देख आपके, असंख्य गुण का गुण-भंडार।
रोक न पाया खुद को तो फिर, हुआ स्तवन को तैयार॥
जैसे बालक सागर का जब, देख बड़ा भारी विस्तार।
अपने हाथों को फै लाकर, कहे न क्या निज मति अनुसार॥

ॐ ह्रीं परमानन्त गुणाय क्लींमहाबीजाक्षरसम्पन्न श्रीपार्श्वनाथ-जिनेन्द्राय अर्घ्यं...।

६. असाध्य कार्य साधक गुण स्तुति

ये योगिना-मपि न यान्ति गुणास्तवेश!
वक्तुं कथं भवति तेषु ममावकाशः।
जाता तदेव - मसमीक्षित-कारितेयं
जल्पन्ति वा निज-गिरा ननु पक्षिणोऽपि॥

ईश! आपके निज गुण गण का, कर न सके योगी गुणगान।

तो फिर उन्हीं गुणों को गाने, कैसे सक्षम मेरा ज्ञान॥
फिर भी उनको गाने का यह, बिना विचारे मेरा काम।
ज्यों निश्चय से निज वाणी से, पक्षी चहकें करें प्रणाम॥

ॐ ह्रीं अगम्य-गुणाय क्लींमहाबीजाक्षरसम्पन्न श्रीपार्श्वनाथ-जिनेन्द्राय अर्घ्यं...।

७. अपवाद-अपमान निवारक स्तुति

आस्ता-मचिन्त्य-महिमा जिन! संस्तवस्ते
नामापि पाति भवतो भवतो जगन्ति।
तीव्रातपोपहत - पान्थ - जनान्निदाघे
प्रीणाति पद्म-सरसः सरसोऽनिलोऽपि॥

अचिन्त्य महिमा वाले जिन के, संस्तव की तो छोड़ो बात।
नाम मात्र संसारी जन को, सुखी करे दुख दूर भगात॥
ज्यों गर्मी में तेज धूप से, तपते जन दुख से हों खिन्न।
पद्म सरोवर मिले न पर वो, सरस हवा पा हुए प्रसन्न॥

ॐ ह्रीं स्तवनार्हाय क्लींमहाबीजाक्षरसम्पन्न श्रीपार्श्वनाथ-जिनेन्द्राय अर्घ्यं...।

८. बिच्छु,सर्पादि विष नाशक स्तुति

हृद्वर्तिनि त्वयि विभो! शिथिली - भवन्ति
जन्तोः क्षणेन निबिडा अपि कर्म-बन्धाः।
सद्यो भुजंगममया इव मध्यभाग-
मभ्यागते वन-शिखण्डिनि चन्दनस्य॥

जैसे चंदन वन में जब भी, आ जाने पर कोई मोर।
चंदन तरु से लिपट रहे जो, नाग पाश तत्क्षण कमजोर॥
वैसे ही जिनदेव आप भी, जिसके दिल को करो निहाल।
उसके कठोर कर्म बन्ध भी, हो जाते ढीले तत्काल॥

ॐ ह्रीं कर्मबन्ध-विनाशकाय क्लींमहाबीजाक्षरसम्पन्न श्रीपार्श्वनाथ-जिनेन्द्राय अर्घ्यं...।

९. भूत-प्रेत बाधा निवारक स्तुति

मुच्यन्त एव मनुजाः सहसा जिनेन्द्र!
रौद्रैरुपद्रव-शतैस्त्वयि वीक्षितेऽपि।
गो-स्वामिनि स्फुरित-तेजसि दृष्टमात्रे
चौरैरिवाशु पशवः प्रपलायमानैः॥

ज्यों बलशाली गो पालक को, तेजी से बस आता देख।
चोर छोड़कर सब पशुओं को, तुरत भागता प्राण समेट॥
ऐसे ही संसारी जन के, रौद्र उपद्रव शतक अनेक।
हो जाते हैं शीघ्र नष्ट वे, हे जिनेन्द्र! बस तुमको देख॥

ॐ ह्रीं दुष्ट-अपवर्ग-विनाशकाय क्लींमहाबीजाक्षरसम्पन्न श्रीपार्श्वनाथ-जिनेन्द्राय अर्घ्यं...।

१०. महान् आपत्तियों से छुटकारा दिलाने वाली स्तुति

त्वं तारको जिन! कथं भविनां त एव
त्वामुद्वहन्ति हृदयेन यदुत्तरन्तः।
यद्वा दृतिस्तरति यज्जलमेष नून
मन्तर्गतस्य मरुतः स किलानुभावः॥

चर्म पात्र जो जल पर तैरे, और गया नदिया के पार।
उसमें भरी हवा ही उसको, ले जाती है परले पार॥
ऐसे कैसे आप जगत के, हो सकते प्रभु तारणहार।
आप हमारे दिल में हो सो, जब हम पार तभी तुम पार॥

ॐ ह्रीं सुध्येयाय क्लींमहाबीजाक्षरसम्पन्न श्रीपार्श्वनाथ-जिनेन्द्राय अर्घ्यं...।

११. मिथ्या अन्धकार को दूर करने की सामर्थ्य

यस्मिन्हर प्रभृतयोऽपि हत-प्रभावाः
सोऽपि त्वया रति-पतिः क्षपितः क्षणेन।
विध्यापिता हुतभुजः पयसाथ येन
पीतं न किं तदपि दुर्धर-वाडवेन॥

जिस जल ने ही महाअग्नि को, बुझा दिया करके अभिमान।
उसे भयंकर बड़वानल क्या, नहीं सुखाती करके मान॥
इसी तरह जिस कामदेव ने, सब पर-देवों को दी मात।
हे प्रभु! तुमने क्षण भर में बस, मार भगाया वह रतिनाथ॥

ॐ ह्रीं अनंगमथनाय क्लींमहाबीजाक्षरसम्पन्न श्रीपार्श्वनाथ-जिनेन्द्राय अर्घ्यं...।

१२. महा आश्चर्यकारी स्तुति

स्वामिन्न-नल्प गरिमाण-मपि प्रपन्नास्-
त्वां जन्तवः कथमहो हृदये दधानाः।
जन्मोदधिं लघु तरन्त्यति लाघवेन

चिन्त्यो न हन्त महतां यदि वा प्रभावः॥

गरिमा गौरव वाले स्वामी, तुम्हें हृदय में जो ले धार।
और शरण में आकर वे जन, तुरत गए भवसागर पार॥
कैसे जल्दी वे तिर जाते, करता यह आश्चर्य जहान।
इसमें केवल प्रभु पुरुषों की, अचिन्त्य होती कृपा महान॥

ॐ ह्रीं अतिशय-गुरुवे क्लींमहाबीजाक्षरसम्पन्न श्रीपार्श्वनाथ-जिनेन्द्राय अर्घ्यं...।

१३. क्रोध विनाशक स्तुति

क्रोधस्त्वया यदि विभो! प्रथमं निरस्तो
ध्वस्तास्तदा वद कथं किल कर्म-चौराः।
प्लोषत्यमुत्र यदि वा शिशिरापि लोके
नील द्रुमाणि विपिनानि न किं हिमानी॥

नाथ! आपने जब पहले ही, क्रिया क्रोध का सत्यानाश।
कर्म चोर फिर ध्वस्त कर दिए, कैसे? कहो करें विश्वास॥
जैसे बर्फ हुई शीतल जब, जग में गिरकर बनी तुषार।
तो उससे फिर हरे-भरे वन, जलें नहीं क्या करो विचार॥

ॐ ह्रीं जितक्रोधाय क्लींमहाबीजाक्षरसम्पन्न श्रीपार्श्वनाथ-जिनेन्द्राय अर्घ्यं...।

१४. कामविकार नाशक स्तुति

त्वां योगिनो जिन! सदा परमात्मरूप-
मन्वेषयन्ति हृदयाम्बुज कोश-देशे।
पूतस्य निर्मल रुचेर्यदि वा किमन्य-
दक्षस्य सम्भव-पदं ननु कर्णिकायाः॥

जैसे निर्मल पावन उज्ज्वल, कमल-बीज का जन्म स्थान।
कमल फूल की छोड़ कर्णिका, अन्य कहीं क्या मिले मुकाम॥
ऐसे ही प्रभु योगी अपने, हृदय कमल के बीचोंबीच।
नित परमातम पारस प्रभु के, दर्शन पा तजते भव कीच॥

ॐ ह्रीं महन्मृग्याय क्लींमहाबीजाक्षरसम्पन्न श्रीपार्श्वनाथ-जिनेन्द्राय अर्घ्यं...।

१५. विशुद्धि वर्धक जिन स्तुति

ध्यानाज्जिनेश! भवतो भविनः क्षणेन
देहं विहाय परमात्म-दशां व्रजन्ति।

तीव्रानलादुपल भाव-मपास्य लोके
चामीकरत्व-मचिरादिव धातु-भेदाः॥

जिस विध जग में धातु भेद सब, पाकर तीव्र आग संस्कार।
पत्थर पना छोड़कर जल्दी, बने शुद्ध सोने का हार॥
ऐसे ही संसारी प्राणी, हे प्रभु! तेरा करके ध्यान।
देह त्याग क्षण में बन जाते, पारस परमातम भगवान॥

ॐ ह्रीं कर्मकिट्ट दहनाय क्लींमहाबीजाक्षरसम्पन्न श्रीपार्श्वनाथ-जिनेन्द्राय अर्घ्यं...।

१६. खोई हुई वस्तु प्रदायक स्तुति

अन्तः सदैव जिन! यस्य विभाव्यसे त्वं
भव्यैः कथं तदपि नाशयसे शरीरम्।
एतत्स्वरूप मथ-मध्य-विवर्तिनो हि
यद्विग्रहं प्रशमयन्ति महानुभावाः॥

जिन भव्यों के अन्तर मन से, ध्याए जाते निःसंदेह।
उन जीवों के कैसे तुम तो, हे प्रभु! नष्ट करो दुख देह॥
सच में ऐसा स्वरूप है जो, मध्यवर्ति है पुरुष महान।
सभी विवादों की जड़ हर ले, निश्चित बनता वह भगवान॥

ॐ ह्रीं देह-देहि-कलह निवारकाय क्लींमहाबीजाक्षरसम्पन्न श्रीपार्श्वनाथ-जिनेन्द्राय अर्घ्यं...।

१७. विषविकारनाशक स्तुति

आत्मा मनीषिभिरयं त्वदभेद - बुद्ध्या
ध्यातो जिनेन्द्र! भवतीह भवत्प्रभावः।
पानीयमप्यमृत - मित्यनु - चिन्त्यमानं
किं नाम नो विष-विकार-मपाकरोति॥

ज्यों जल को अमृत समान कर, जो कोई वह पिए जरूर।
तो फिर उसकी विष की बाधा, तुरत नहीं होती क्या दूर॥
अपनी आतम पारस जैसी, ज्ञानी यदि करता यों ध्यान।
तो वह कृपा आपकी पाकर, बने नहीं क्या आप समान॥

ॐ ह्रीं संसार विष-सुधोपमाय क्लींमहाबीजाक्षरसम्पन्न श्रीपार्श्वनाथ-जिनेन्द्राय अर्घ्यं...।

१८. मिथ्या अभिप्राय नाशक स्तुति

त्वामेव वीत-तमसं परवादिनोऽपि

नूनं विभो! हरि-हरादि-धिया प्रपन्नाः।
किं काच-कामलिभिरीश सितोऽपि शंखो
नो गृह्यते विविध-वर्ण-विपर्ययेण॥

जिसे पीलिया रोग हुआ वह, रंग करे उल्टे स्वीकार।
श्वेत शंख भी पीला-पीला, क्या? नहिं देखे वह बीमार॥
इसी तरह पर मत अनुयायी, तुम्हें कहें अपने भगवान।
जबकि आप तो पारस प्रभु हो, सच्चे वीतराग विज्ञान॥

ॐ ह्रीं सर्व जन वन्द्याय क्लींमहाबीजाक्षरसम्पन्न श्रीपार्श्वनाथ-जिनेन्द्राय अर्घ्यं...।

१९. अशोकवृक्ष प्रातिहार्य - वैभव वर्द्धक स्तुति

धर्मोपदेश समये सविधानुभावा-
दास्तां जनो भवति ते तरुरप्यशोकः।
अभ्युद्गते दिनपतौ समहीरुहोऽपि
किं वा विबोध-मुपयाति न जीव-लोकः॥

ज्यों ही दिनपति के उगने पर, फल-फूलों की छोड़ो बात।
दुनियाँ भी क्या पुलकित ना हो, पाकर मंगलमयी प्रभात॥
त्यों ही दिव्य देशना के क्षण, निकट आप के जब हो लोक।
तो भक्तों की बात छोड़िये, सच में बनते वृक्ष अशोक॥

ॐ ह्रीं अशोकवृक्ष-प्रातिहार्ययुक्त क्लींमहाबीजाक्षरसम्पन्न श्रीपार्श्वनाथ-जिनेन्द्राय अर्घ्यं...।

२०. पुष्पवृष्टि प्रातिहार्य - स्त्री सम्बन्धी समस्त रोग नाशक स्तुति

चित्रं विभो! कथमवाङ्मुख-वृन्तमेव
विष्वक्पतत्य-विरला सुर-पुष्पवृष्टिः।
त्वद्गोचरे सुमनसां यदि वा मुनीश!
गच्छन्ति नूनमध एव हि बन्धनानि॥

पुष्प वृष्टि सुर सघन करें तो, चमत्कार हों भाव विभोर।
नीचे डण्ठल ऊपर कलियाँ, यों क्यों पुष्प गिरे चहुँ ओर॥
इसका मतलब सुमन पुरुष जो, हे प्रभु! तुझसे रहे न दूर।
उसके बन्धन गिर ही जाते, फूलों सा वह खिले जरूर॥

ॐ ह्रीं सुर-पुष्पवृष्टि-प्रातिहार्ययुक्त क्लींमहाबीजाक्षरसम्पन्न श्रीपार्श्वनाथ-जिनेन्द्राय अर्घ्यं...।

२१. दिव्यध्वनि प्रातिहार्य - मूक-बधिर-अन्ध नाशक स्तुति

स्थाने गभीर-हृदयोदधि-सम्भवायाः
पीयूषतां तव गिरः समुदीरयन्ति।
पीत्वा यतः परम-सम्मद-संगभाजो
भव्या व्रजन्ति तरसाप्यजरामरत्वम्॥

प्रभु के जो गंभीर हृदय के, महा सिन्धु से हो उत्पन्न।
वाणी वह जिनवाणी गंगा, अमृत जैसी करे प्रसन्न॥
जिसका कर जल-पान भव्य जन, चिदानन्द में कर विश्राम।
अजर अमर बनते सिद्धातम, जिनको बारंबार प्रणाम॥

ॐ ह्रीं दिव्यध्वनि-प्रातिहार्ययुक्त क्लींमहाबीजाक्षरसम्पन्न श्रीपार्श्वनाथ-जिनेन्द्राय अर्घ्यं...।

२२. चामर प्रातिहार्य - शत्रु को अनुकूल करने वाली स्तुति

स्वामिन्! सुदूर-मवनम्य समुत्पतन्तो
मन्ये वदन्ति शुचयः सुर-चामरौघाः।
येऽस्मै नतिं विदधते मुनि-पुंगवाय
ते नून-मूर्ध्व-गतयः खलु शुद्ध-भावाः॥

नाथ! आपके अगल-बगल में, नीचे से ऊपर की ओर।
देवों ने जो चँवर ढुराये, वो क्या शिक्षा दें चितचोर॥
मैं मानूँ जो शुद्ध-भाव से, मुनि पुंगव को करे प्रणाम।
बाल न बाँका उसका होगा, सबसे ऊँचा जग में नाम॥

ॐ ह्रीं सुर-चामर-प्रातिहार्ययुक्त क्लींमहाबीजाक्षरसम्पन्न श्रीपार्श्वनाथ-जिनेन्द्राय अर्घ्यं...।

२३. सिंहासन प्रातिहार्य - राजादि पद प्रदायी स्तुति

श्यामं गभीर-गिरमुज्ज्वल-हेम-रत्न-
सिंहासनस्थ-मिह भव्य-शिखण्डिनस्त्वाम्।
आलोकयन्ति रभसेन नदन्तमुच्चैः
चामीकराद्रि-शिरसीव नवाम्बुवाहम्॥

बहुत सुनहरा रत्न जड़ित जो, सिंहासन उज्ज्वल विख्यात।
जिस पर हैं गंभीर वचन-मय, श्याम सलोने पारसनाथ॥
यों लगते सुरगिरी शिखर पर, श्याम मेघ गरजे ज्यों दूर।

लगा टकटकी ताक रहे हों, पारसप्रभु को भव्य मयूर॥

ॐ ह्रीं सिंहासन-प्रातिहार्ययुक्त क्लींमहाबीजाक्षरसम्पन्न श्रीपार्श्वनाथ-जिनेन्द्राय अर्घ्यं...।

२४. भामण्डल प्रातिहार्य - कान्ति नीरोग शरीर प्रदायक स्तुति

उद्गच्छता तव शिति-द्युति-मण्डलेन
लुप्तच्छदच्छवि-रशोक - तरुर्बभूव।
सान्निध्यतोऽपि यदि वा तव वीतराग!
नीरागतां व्रजति को न सचेतनोऽपि॥

उज्ज्वल चम-चम भामण्डल जब, चमके प्रभु में हो तल्लीन।
जिसके आगे अशोक तरु भी, शरमा जाए हो छवि हीन॥
तब फिर ऐसा कौन सचेतन, जिसने तेरा पाया साथ।
क्या वह वीतरागी न होगा, होगा! होगा! होगा! नाथ॥

ॐ ह्रीं भामण्डल-प्रातिहार्ययुक्त क्लींमहाबीजाक्षरसम्पन्न श्रीपार्श्वनाथ-जिनेन्द्राय अर्घ्यं...।

२५. देवदुन्दुभि प्रातिहार्य - नेतृत्व शक्ति प्रदायक स्तुति

भोः भोः प्रमाद-मवधूय भजध्वमेन-
मागत्य निर्वृति-पुरीं प्रति सार्थवाहम्।
एतन्निवेदयति देव! जगत्त्रयाय
मन्ये नदन्नभिनभः सुर-दुन्दुभिस्ते॥

नाथ! आपकी सुर दुंदुभि से, गूँजे धरा गगन सब ओर।
कहे त्रिजग से अरे! अरे! सब, प्रमाद को छोड़ो झकझोर॥
मोक्षपुरी को जाने वाले, मिले सारथी पारसनाथ।
इन्हें पूज अपना हित कर लो, आश्रय पाकर टेको माथ॥

ॐ ह्रीं देव-दुन्दुभि-प्रातिहार्ययुक्त क्लींमहाबीजाक्षरसम्पन्न श्रीपार्श्वनाथ-जिनेन्द्राय अर्घ्यं...।

२६. छत्रत्रय प्रातिहार्य - कालसर्प योग भय निवारक स्तुति

उद्योतितेषु भवता भुवनेषु नाथ!
तारान्वितो विधुरयं विहताधिकारः।
मुक्ता कलाप-कलितोल्ल सितातपत्र-
व्याजात्त्रिधा धृत-तनुर्ध्रुव-मभ्युपेतः॥

प्रभु तुमने जब दिव्य ज्ञान से, किया प्रकाशित सब संसार।
तभी सितारों से घिर करके, पहन मोतियों का शृंगार॥

अपने पथ से भ्रष्ट चन्द्रमा, बना तीन छत्रों सी देह।
सेवा में वह हाथ जोड़कर, तत्पर हाजिर निःसंदेह॥

ॐ ह्रीं छत्रत्रय-प्रातिहार्ययुक्त क्लींमहाबीजाक्षरसम्पन्न श्रीपार्श्वनाथ-जिनेन्द्राय अर्घ्यं...।

२७. कान्ति-प्रताप यश प्रदायी स्तुति

स्वेन प्रपूरित - जगत्त्रय - पिण्डितेन
कान्ति-प्रताप-यशसा मिव संचयेन।
माणिक्य - हेम - रजत - प्रविनिर्मितेन
सालत्रयेण भगवन्नभितो विभासि॥

तीन-तीन ऊँचे परकोटे, नाथ! आपके चारों ओर।
सोने चाँदी माणिक से जो, हुए सुशोभित हैं चितचोर॥
यों लगते ज्यों पारसप्रभु की, यशकीर्ति से हों भरपूर।
तीनों लोक समाएँ जिसमें, भक्तों को सुख दिए जरूर॥

ॐ ह्रीं शालत्रयाधिपतये क्लींमहाबीजाक्षरसम्पन्न श्रीपार्श्वनाथ-जिनेन्द्राय अर्घ्यं...।

२८. असमय निधन निवारक स्तुति

दिव्य-स्त्रजो जिन! नमत्त्रिदशाधिपाना-
मुत्सृज्य रत्न-रचितानपि मौलि-बन्धान्।
पादौ श्रयन्ति भवतो यदि वाऽपरत्र
त्वत्संगमे सुमनसो न रमन्त एव॥

हे प्रभु! तुम्हें झुके इन्द्रों के, रत्नजड़ित मुकुटों का माथ।
दिव्य पुष्प की मालाएँ तज, चाहें तव चरणों का साथ॥
सच ही है यह सुमन सु-मन जो, आ पहुँचा हो तेरे गाँव।
कहीं नहीं वह रम सकता फिर, पाकर पारसप्रभु की छाँव॥

ॐ ह्रीं भक्त-जनानवन-पतिराय क्लींमहाबीजाक्षरसम्पन्न श्रीपार्श्वनाथ-जिनेन्द्राय अर्घ्यं...।

२९. संकटमोचन स्तुति

त्वं नाथ! जन्म-जलधेर्विपराङ्मुखोऽपि
यत्तारयस्यसुमतो निज-पृष्ठ-लग्नान्।
युक्तं हि पार्थिव-निपस्य सतस्तवैव
चित्रं विभो! यदसि कर्म -विपाक-शून्यः॥

पार्श्वनाथ प्रभु भवसागर से, पूर्ण विमुख होकर भी आप।

अपने अनुयायी जीवों को, तारो हरकर उनके पाप॥
उचित किन्तु आश्चर्य यही कि, कर्म शून्य होकर भी ईश।
उल्टे पके घड़े सम तारो, भक्तों को देकर आशीष॥

ॐ ह्रीं निजपृष्ट-लग्नभय-तारकाय क्लींमहाबीजाक्षरसहित श्री पार्श्व-नाथाय अर्घ्यं...।

३०. सर्व कार्य विकासक स्तुति

विश्वेश्वरोऽपि जन-पालक दुर्गतस्त्वं
किं वाक्षर-प्रकृतिरप्यलिपिस्त्वमीश।
अज्ञान-वत्यपि सदैव कथंचिदेव
ज्ञानं त्वयि स्फुरति विश्व-विकास हेतुः॥

जनपालक! जगपति होकर भी, दुर्गत हो तुम निर्धन रूप।
अक्षर स्वभाव के होकर भी, कौन करे लिपिबद्ध स्वरूप॥
अज्ञानी जन के संरक्षक, हे! पारसप्रभु हो अविराम।
विश्व प्रकाशी केवलज्ञानी, तुमको बारम्बार प्रणाम॥

ॐ ह्रीं विस्मयनीय-मूर्तये क्लींमहाबीजाक्षरसम्पन्न श्रीपार्श्वनाथ-जिनेन्द्राय अर्घ्यं...।

३१. दुष्टजन संयोग निवारक स्तुति

प्राग्भार - सम्भृत - नभांसि-रजांसि रोषा
दुत्थापितानि कमठेन शठेन यानि।
छायापि तैस्तव न नाथ! हता हताशो
ग्रस्तस्त्वमीभिरयमेव परं दुरात्मा॥

दुष्ट कमठ ने वैर क्रोध से, कर उपसर्ग महा संत्रास।
ऐसी धूल उड़ाई तुम पर, जो ढकती पूरा आकाश॥
लेकिन उससे नाथ! आपकी, छाया भी ना हुई मलीन।
किन्तु कमठ तो उसी धूल से, ग्रस्त हुआ मैला अतिदीन॥

ॐ ह्रीं कमठोत्थापित-धूलि-उपद्रव-जिताय क्लींमहाबीजाक्षरसम्पन्न श्रीपार्श्वनाथ-जिनेन्द्राय अर्घ्यं...।

३२. पीड़ा पहुँचाने वाले दुर्जनों से रक्षा करने वाली स्तुति

यद्गर्जदूर्जित - घनौघमदभ्र - भीम
भ्रश्यत्तडिन् - मुसल - मांसल - घोरधारम्।
दैत्येन मुक्तमथ दुस्तर-वारि दध्रे,
तेनैव तस्य जिन! दुस्तर-वारि कृत्यम्॥

तत्पश्चात कमठ ने प्रभु पर, बिजली खूब गिरायी तेज।
मूसलधार नीर बरसाकर, बहुत-बहुत गरजाए मेघ॥
किन्तु भयंकर अथाह वह जल, बना कमठ को तीर कमान।
उससे प्रभु का कुछ ना बिगड़ा, जय-जय-जय पारस भगवान॥

ॐ ह्रीं कमठ-कृत-जलधारा-उपसर्ग निवारकाय क्लींमहाबीजाक्षरसम्पन्न श्रीपार्श्वनाथ-जिनेन्द्राय अर्घ्यं...।

३३. अग्नि भूकम्पादि भय निवारक स्तुति

ध्वस्तोर्ध्व- केश - विकृताकृति-मर्त्य-मुण्ड
प्रालम्ब-भृद्भयदवक्त्र विनिर्यदग्निः।
प्रेतव्रजः प्रति भवन्तमपीरितो यः
सोऽस्याभवत्प्रतिभवं भवदुःख-हेतुः॥

फिर उसने बिखरे बालों के, भूत भिजाए बहु विकराल।
नर मुण्डों की माला वाले, मुख से उगलें ज्वाला लाल॥
ऐसे प्रेतवर्ग से प्रभु जी, हुए न चंचल रहे अडोल।
बने कमठ को वे दुख दायक, ऐसे प्रभु की जय-जय बोल॥

ॐ ह्रीं कमठ-कृत-पैशाचिक-उपद्रव जितशीलाय क्लींमहाबीजाक्षरसम्पन्न श्रीपार्श्वनाथ-जिनेन्द्राय अर्घ्यं...।

३४. असाध्य रोग विनाशक स्तुति

धन्यास्त एव भुवनाधिप! ये त्रिसन्ध्य-
माराधयन्ति विधिवद्विधुतान्य—कृत्याः।
भक्त्योल्लसत्पुलक पक्ष्मल-देह-देशाः
पाद-द्वयं तव विभो! भुवि जन्मभाजः॥

नाथ! आपकी विनय भक्ति से, जिनका पुलकित हुआ शरीर।
खुशी-खुशी वे अन्य कार्य तज, विधिवत अर्पें श्रद्धा नीर॥
हे! त्रयजग के नाथ आपके, चरण कमल जो भजें त्रिकाल।
धन्य-धन्य हैं वे इस भू पर, वही भक्त हों मालामाल॥

ॐ ह्रीं धार्मिकवन्दिताय क्लींमहाबीजाक्षरसम्पन्न श्रीपार्श्वनाथ-जिनेन्द्राय अर्घ्यं...।

३५. सर्व विपत्ति निवारक स्तुति

अस्मिन्नपार-भव-वारिनिधौ मुनीश!
मन्ये न मे श्रवण गोचरतां गतोऽसि।

आकर्णिते तु तव गोत्र-पवित्र-मंत्रे
किं वा विपद्विषधरी सविधं समेति॥

हे मुनीश! मैं यूँ मानूँ कि, भवसागर जो रहा अपार।
इसमें मैंने वचन आपके, सुने नहीं ना किया विचार॥
अगर आपका नाम मंत्र जो, पावन सुनकर बनता दास।
तो आपत्ती रूप नागनी, क्या आ सकती मेरे पास॥

ॐ ह्रीं पवित्रनाम-ध्येयाय क्लींमहाबीजाक्षरसम्पन्न श्रीपार्श्वनाथ-जिनेन्द्राय अर्घ्यं...।

३६. विजेता बनाने वाली स्तुति

जन्मान्तरेपि तव पादयुगं न देव!
मन्ये मया महितमीहित-दान-दक्षम्।
तेनेह जन्मनि मुनीश! पराभवानां
जातो निकेतनमहं मथिताशयानाम्॥

यही मानता मैं स्वामी कि, पर जन्मों में मैंने देव।
तेरे चरण कमल ना पूजे, इच्छित फल जो दें स्वयमेव॥
इसीलिए तो इस भव में भी, मनोरथों का जो हर्त्तार।
पराजयों का धाम बना हूँ, कैसे हो मेरा उद्धार॥

ॐ ह्रीं पूतपादाय क्लींमहाबीजाक्षरसम्पन्न श्रीपार्श्वनाथ-जिनेन्द्राय अर्घ्यं...।

३७. अनर्थ निवारक स्तुति

नूनं न मोह तिमिरावृत-लोचनेन
पूर्वं विभो! सकृदपि प्रविलोकितोऽसि।
मर्माविधो विधुरयन्ति हि मामनर्थाः
प्रोद्यत्प्रबन्ध-गतयः कथमन्यथैते॥

मोह अंध से ढके हुए हैं, मेरे दोनों नयन विशाल।
जिससे मैंने एक बार भी, तुझे न देखा ओ! जिनलाल॥
यदि दर्शन तेरे करता तो, कर्मशत्रु अतिशय बलवान।
मुझे नहीं दुख दे सकते फिर, मैं खुद बनता आप समान॥

ॐ ह्रीं दर्शनीयाय क्लींमहाबीजाक्षरसम्पन्न श्रीपार्श्वनाथ-जिनेन्द्राय अर्घ्यं...।

३८. भगवान् बनाने वाली स्तुति

आकर्णितोऽपि महितोऽपि निरीक्षितोऽपि
नूनं न चेतसि मया विधृतोऽसि भक्त्या।

जातोऽस्मि तेन जन-बान्धव! दुःखपात्रं
यस्मात्क्रियाः प्रतिफलन्ति न भाव-शून्याः॥

यद्यपि मैंने दिव्य मंत्र भी, सुने आपके बहुतों बार।
दर्शन किए रचाई पूजन, खूब लगायी जय-जयकार॥
किंतु भक्ति से धरा न मन में, अतः बना मैं दुख का धाम।
क्योंकि क्रियाएँ भाव शून्य जो, होती हैं निष्फल निष्काम॥

ॐ ह्रीं भक्तिहीन-जनबान्धवाय क्लींमहाबीजाक्षरसम्पन्न श्रीपार्श्वनाथ-जिनेन्द्राय अर्घ्यं...।

३९. दुःखीजनों के रक्षक श्री जिन

त्वं नाथ! दुःखि-जन-वत्सल! हे शरण्य!
कारुण्य-पुण्य-वसते! वशिनां वरेण्य!
भक्त्या नते मयि महेश! दयां विधाय
दुःखाङ्कुरोद्दलन-तत्परतां विधेहि॥

हे! जनपालक दुखी जनों पर, आप बहाते प्रेम फुहार।
दीन हीन पर हे! योगीश्वर, तुम बरसाते करुणाधार॥
झुके भक्ति से विनम्र मुझ पर, दया करो हे! दयानिधान।
दुख अंकुर जल्दी नशवा दो, हे! महेश पारस भगवान॥

ॐ ह्रीं भक्तजन-वत्सलाय क्लींमहाबीजाक्षरसम्पन्न श्रीपार्श्वनाथ-जिनेन्द्राय अर्घ्यं...।

४०. सौभाग्य वर्धक स्तुति

निःसंख्य सार शरणं शरणं शरण्य-
मासाद्य सादित-रिपु-प्रथितावदानम्
त्वत्पाद-पंकजमपि प्रणिधान-वन्ध्यो
वन्ध्योऽस्मि चेद्भुवन-पावन हा हतोऽस्मि॥

मित्र बन्धु के अभाव में तो, आश्रय के प्रभु हो दातार।
पूज्य भुवन पावन पारस प्रभु, हे! शरणागत पालनहार॥
कर्म विनाशी धर्म प्रकाशी, चरण प्राप्त कर उनका ध्यान।
यदि न किया तो मरा अभागा, कैसे हो अपना कल्याण॥

ॐ ह्रीं सौभाग्यदायक-पदकमलयुगाय क्लींमहाबीजाक्षरसम्पन्न श्रीपार्श्वनाथ-जिनेन्द्राय अर्घ्यं...।

४१. सर्वग्रह निवारक स्तुति

देवेन्द्र-वन्द्य! विदिताखिल-वस्तुसार!
संसार-तारक! विभो! भुवनाधिनाथ!
त्रायस्व देव! करुणाहृद्! मां पुनीहि
सीदन्तमद्य भयद-व्यसनाम्बुराशेः॥

हे! इन्द्रों के वन्दनीय विभु, विश्वतत्त्व के जाननहार।
हे! भवसागर तारक प्रभु जी, करुणा सरवर की जलधार॥
हे! त्रय जग के नाथ मुझे भी, महा दुखी भव जल से आज।
शीघ्र बचाओ शुद्ध बनाओ, सुखी करो पारस जिनराज॥

ॐ ह्रीं सर्वपदार्थवेदिने क्लींमहाबीजाक्षरसम्पन्न श्रीपार्श्वनाथ-जिनेन्द्राय अर्घ्यं...।

४२. अचिन्त्य फल प्रदायक स्तुति

यद्यस्ति नाथ! भवदङ्घ्रि-सरोरुहाणां
भक्तेः फलं किमपि संतत-संचितायाः।
तन्मे त्वदेक-शरणस्य शरण्य! भूयाः
स्वामी त्वमेव भुवनेऽत्र भवान्तरेऽपि॥

मेरी एक हि शरण आप हो, शरणभूत हे! पारसनाथ।
तभी आपके चरण कमल की, भक्ति रचाई टेका माथ॥
यदि कुछ भी उससे संचित हो, तो चाहूँ बस इतना दाम।
इस भव में भी परभव में भी, दिल में हो बस पारसनाम॥

ॐ ह्रीं पुण्य-बहुजन-सेव्याय क्लींमहाबीजाक्षरसम्पन्न श्रीपार्श्वनाथ-जिनेन्द्राय अर्घ्यं...।

४३. अमंगल-अनिष्ट निवारक स्तुति

इत्थं समाहित-धियो विधिवज्जिनेन्द्र!
सान्द्रोल्लसत्पुलक - कंचुकितांग - भागाः।
त्वद्बिम्ब - निर्मल - मुखाम्बुज - बद्धलक्ष्या
ये संस्तवं तव विभो! रचयन्ति भव्याः॥

हे! जिनवर प्रभु भव्य जीव जो, सावधान धर बुद्धि विवेक।
निर्मल प्रभु मुख कमल निहारे, अपलक सादर घुटने टेक॥
बहुत-बहुत पुलकित तन मन से, करके प्रभु पारस से राग।
विधिवत् भक्ति गीत रचते वो, जगा रहे अपना सौभाग्य॥

ॐ ह्रीं जन्म-मृत्यु-निवारकाय क्लींमहाबीजाक्षरसम्पन्न श्रीपार्श्वनाथ-जिनेन्द्राय अर्घ्यं...।

४४. क्रमशः मोक्षफल प्रदायी स्तुति

जननयन 'कुमुदचन्द्र' प्रभास्वराः स्वर्गसम्पदो भुक्त्वा।
ते विगलित-मलनिचया अचिरान्मोक्षं प्रपद्यन्ते॥

नेत्र कमल उन भक्त जनों के, चंदा जैसे करें प्रकाश।
उज्ज्वल उज्ज्वल स्वर्गलोक का, वैभव भोगें भोग विलास॥
शीघ्र अन्त में कर्म नशाकर, मोक्ष-महल में करें निवास।
तो दुख संकट उनको हों क्या, जो हैं पारस प्रभु के खास॥

ॐ ह्रीं कुमुदचन्द्र-यतिसेवित-पादाय क्लींमहाबीजाक्षरसम्पन्न श्रीपार्श्वनाथ-जिनेन्द्राय अर्घ्यं...।

जाप्य मंत्र—ॐ ह्रीं श्रीं क्लीं अर्हं श्री पार्श्वनाथ-जिनेन्द्राय नमो नमः।

जयमाला

(दोहा)

कल्याणमंदिर के प्रभु, पार्श्वनाथ भगवान।
जिनको नमोऽस्तु कर करें, जयमाला गुणगाण॥

(ज्ञानोदय)

जब तक यह जीवन है तब तक, दुख संकट उपसर्ग रहें।
जो इन पर जय विजय करें वे, पार्श्वनाथ भगवान बनें॥
पर इनसे जो हुए पराजित, उनका कौन सहारा है।
सो कल्याण रूप मंदिर का, हमको मिला इशारा है॥१॥

जी हाँ ये कल्याण नाम का, वही पूज्य मंदिर स्तोत्र।
कुमुदचन्द्र आचार्य पूज्य ने, जिसे रचा भक्ति का स्रोत॥
जिसकी महिमा प्रभाव से तो, अतिशय हो ही जाते हैं।
जिससे देव देवियाँ मिलकर, चमत्कार दिखलाते हैं॥२॥

उज्जयनी के विक्रम राजा, कुशल प्रजा संचालक थे।
तब ही गंगा में स्नान को, आए तपसी साधक थे॥
योग्य शिष्य की तलाश करने, एक युवा को देख लिया।
धक्का दे फिर वाद विवाद कर, निर्णय सुन्दर एक लिया॥३॥

लेकिन तपसी हुए पराजित, कुमुदचन्द्र फिर नाम रखा।
जिनशासन अनुगामी क्षपणक, उनका यह उपनाम रखा॥
चित्तौढगढ़ पहुँचकर जिनने, पार्श्वनाथ के दर्शन कर।

कीर्तिस्तंभ के संकेतों से, एक गुफा खोली जाकर॥४॥
मात्र एक ही पृष्ठ पढ़ा कि, तुरत द्वार वह बंद हुआ।
अदृशवाणी हुई वहाँ पर, बस इतना ही पुण्य हुआ॥
एक बार इक योगी ने जब, कुमुदचन्द्र को ललकारा।
तेरा ज्ञानहीन है मुझसे, वरना कर अतिशय न्यारा॥५॥
राजा कपिल तभी यह बोला, इक पत्थर को करो नमन।
कुमुदचन्द्र तत्क्षण स्वीकारे, किए पार्श्व प्रभु का चिंतन॥
तब कल्याण महा मंदिर का, कर डाला स्तोत्र सृजन।
ज्यों ही 'आकर्णितोऽपि' वाले, किए छन्द का पाठ भजन॥६॥
तो चित्तौड़गढ़ वाले प्रभू, पार्श्वनाथजी प्रकट हुए।
ज्यों ही जय-जयकार हुई तो, हाथ जोड़ सब विनत हुए॥
कुमुदचन्द्र गुरु चमक उठे तब, योगी जी को क्षमा किया।
तब से अब तक अतिशय दिखते, जिनने सबको धर्म दिया॥ ७॥
अपनी केवल यही प्रार्थना, पार्श्वनाथ प्रभु भगवन से।
श्री कल्याण महा मंदिर से, जुड़े रहें जिनशासन से॥
सो होगी सुख शान्ति विश्व में, दुख उपसर्ग न आएंगे।
'सुव्रतसागर' पाठ भजन कर, मोक्ष महल झलकाएंगे॥८॥

ॐ ह्रीं श्रीं क्लींमहाबीजाक्षरसम्पन्न श्रीपार्श्वनाथ-जिनेन्द्राय अनर्घपदप्राप्तये जयमाला पूर्णार्घ्यं...।

(दोहा)

पार्श्वनाथ स्वामी करें, विश्वशान्ति कल्याण।
प्रासुक जल की धार दे, हम पूजत भगवान॥

(शान्तये शान्तिधारा)

कल्पवृक्ष के पुष्प सम, पुष्पांजलि पद लाए।
भवदुःखों को मेंट दो, पार्श्वनाथ जिनराय॥

(पुष्पांजलिं...)

===

श्री एकीभाव-स्तोत्र विधान

ईसा की ११ वीं शताब्दी में आचार्य वादिराजजी द्वारा भगवत् भक्ति में रची गई यह उत्तम रचना है। इस स्तोत्र में २५ पद्य मन्दाक्रान्ता छन्द में हैं और एक अंतिम छन्द उनकी प्रशंसा में किन्हीं ने उनकी स्तुति में लिखा है जो स्वागता छन्द में। भक्तिभावना की विशिष्टता को लिए यह स्तोत्र सरस और प्रौढ़ है। प्रचलित कथानुसार इस स्तोत्र के प्रभाव से आचार्य महाराज का कुष्ठरोग से आक्रान्त शरीर स्वर्ण कांतिमय हो गया था।

स्थापना (शंभु)

जब घोर उपद्रव होते तब, जिनभक्ति नई रच जाती है।
त्यों एकीभाव की महिमा है, जो अतिशय खूब दिखाती है॥
सो वृषभनाथ से वादिराज तक, हम तो नमोऽस्तु कर लेंगे।
प्रभु! हृदय हमारे आओ तो, हम सादर पूजन कर लेंगे॥

ॐ ह्रीं श्रीं क्लीं अर्हं एकीभाव-स्तोत्र-आराध्य श्रीवृषभनाथजिनेन्द्र! अत्र अवतर-अवतर...। अत्र तिष्ठ-तिष्ठ ठः ठः...। अत्र मम सन्निहितो भव-भव वषट्...।(पुष्पांजलिं...)

जल बिना मरें हम गर्मी में, हम अस्त-व्यस्त वर्षा से हों।
ठण्डी में बर्फ प्राण ले ले, फिर यह जल देव कहाँ से हों॥
इस जल के दूर उपद्रव हों, सो वृषभनाथ को हम ध्याएँ।
अब एकीभाव स्तोत्र भजें, हम करके नमोऽस्तु गुण गाएँ॥

ॐ ह्रीं श्रीं क्लीं अर्हं एकीभाव-स्तोत्र-आराध्य श्रीवृषभनाथजिनेन्द्राय जन्म-जरा-मृत्यु विनाशनाय जलं...।

जब हम ठण्डे पड़ जाते हैं, तो दुनियाँ हमें जलाती है।
जो आग हमें जीवन देती, वो आग हमें खा जाती है॥
भव आग बने चंदन जैसी, सो वृषभनाथ को हम ध्याएँ।
अब एकीभाव स्तोत्र भजें, हम करके नमोऽस्तु गुण गाएँ॥

ॐ ह्रीं श्रीं क्लीं अर्हं एकीभाव-स्तोत्र-आराध्य श्रीवृषभनाथजिनेन्द्राय संसारताप विनाशनाय चंदनं...।

पद पैसा मान प्रतिष्ठा का, लालच दुनियाँ में खूब दिखे।
हैं मूल्य कहाँ मानवता के, विश्वास कहीं भी नहीं टिके॥
यह क्षत-विक्षत जग अक्षत हो, सो वृषभनाथ को हम ध्याएँ।

अब एकीभाव स्तोत्र भजें, हम करके नमोऽस्तु गुण गाएँ॥

ॐ ह्रीं श्रीं क्लीं अर्हं एकीभाव-स्तोत्र-आराध्य श्रीवृषभनाथजिनेन्द्राय अक्षयपद प्राप्तये अक्षतान्...।

जो भ्रमर फूल पर मँडराते, वे भ्रमर फूल से छले गए।
जो जीव रमें इस दुनियाँ में, वे निश्चित जग से ठगे गए॥
यह फूल-शूल का खेल मिटे, सो वृषभनाथ को हम ध्याएँ।
अब एकीभाव स्तोत्र भजें, हम करके नमोऽस्तु गुण गाएँ॥

ॐ ह्रीं श्रीं क्लीं अर्हं एकीभाव-स्तोत्र-आराध्य श्रीवृषभनाथजिनेन्द्राय कामबाण विध्वंसनाय पुष्पाणि...।

इस एकीभाव की भक्ति में, बस चार पंक्ति के छन्द रहे।
जो जीभ चार अंगुल वाली, पर विजयों के अनुबन्ध रहे॥
निज आतम का नैवेद्य चखें, सो वृषभनाथ को हम ध्याएँ।
अब एकीभाव स्तोत्र भजें, हम करके नमोऽस्तु गुण गाएँ॥

ॐ ह्रीं श्रीं क्लीं अर्हं एकीभाव-स्तोत्र-आराध्य श्रीवृषभनाथजिनेन्द्राय क्षुधारोग विनाशनाय नैवेद्यं...।

जड़ दीप दिखाता पथ जग को, पर कभी जला दे आँचल को।
विश्वास करें कैसे इस पर, जो दे जाता है काजल को॥
यह दीप सदा अनुकूल रहे, सो वृषभनाथ को हम ध्याएँ।
अब एकीभाव स्तोत्र भजें, हम करके नमोऽस्तु गुण गाएँ॥

ॐ ह्रीं श्रीं क्लीं अर्हं एकीभाव-स्तोत्र-आराध्य श्रीवृषभनाथजिनेन्द्राय मोहांऽधकार विनाशनाय दीपं...।

इन कर्म कलंक मिटाने को, हर यत्न किया हर द्वार गए।
पर हाय! कर्म तो मिट न सके, ये हमसे बाजी मार गए॥
अब कर्म कलंक धूप हर ले, सो वृषभनाथ को हम ध्याएँ।
अब एकीभाव स्तोत्र भजें, हम करके नमोऽस्तु गुण गाएँ॥

ॐ ह्रीं श्रीं क्लीं अर्हं एकीभाव-स्तोत्र-आराध्य श्रीवृषभनाथजिनेन्द्राय अष्टकर्म-दहनाय धूपं...।

इन भावों का फल क्या होगा, इस पर तो अपना ध्यान नहीं।
सो आकुल-व्याकुल भटक रहे, शुभ शुद्ध बिना कल्याण नहीं॥
शुभ फल से शुद्ध मिले हमको, सो वृषभनाथ को हम ध्याएँ।
अब एकीभाव स्तोत्र भजें, हम करके नमोऽस्तु गुण गाएँ॥

ॐ ह्रीं श्रीं क्लीं अर्हं एकीभाव-स्तोत्र-आराध्य श्रीवृषभनाथजिनेन्द्राय मोक्षफल-प्राप्तये फलं...।

इस एकीभाव की महिमा को, हम कैसे पूर्ण सुनाएंगे।
उपकार अनन्तों हैं हम पर, हम सादर गाथा गाएंगे॥
यह अर्घ्य अनर्घ हमें कर दे, सो वृषभनाथ को हम ध्याएँ।
अब एकीभाव स्तोत्र भजें, हम करके नमोऽस्तु गुण गाएँ॥

ॐ ह्रीं श्रीं क्लीं अर्हं एकीभाव-स्तोत्र-आराध्य श्रीवृषभनाथजिनेन्द्राय अनर्घपद प्राप्तये अर्घ्यं...।

अर्घ्यावली

१. दुख कर्मबन्धन नाशक

एकीभावं गत इव मया यः स्वयं कर्मबन्धो
घोरं दुःखं भवभव गतो दुर्निवारः करोति।
तस्याप्यस्य त्वयि जिनरवे भक्तिरुन्मुक्तये चेत्
जेतुं शक्यो भवति न तया कोऽपरस्तापहेतुः॥

(अर्ध ज्ञानोदय)

वीतराग प्रभु के चरणों में, सविनय शीश झुकाते हैं।
'एकीभाव' से जिनवन्दन की, महिमा के गुण गाते हैं॥

(हाकलिका)

एकमेक खुद मुझ से हो, कठिनाई से हटते जो।
कर्म बन्ध मम सह रहते, घोर दुखी भव-भव करते॥
भक्ति आपकी गुण वाली, कर्मबन्ध हरने वाली।
अन्य ताप फिर कौन रहा?, जिसे जीतना कठिन महा॥

(अर्ध ज्ञानोदय)

वादिराज मुनि की रचना को, श्रद्धा सुमन चढ़ाते हैं।
वृषभनाथ को करके नमोऽस्तु, सब जग को महकाते हैं॥

ॐ ह्रीं बहुदुःख-कर्मबन्धननाशक-एकीभावपन-लाभाय श्रीवृषभनाथ-जिनेन्द्राय अर्घ्यं...।

२. पाप समूह नाशक

ज्योतीरूपं दुरितनिवहध्वान्तविध्वंसहेतुं
त्वामेवाहुर्जिनवर ! चिरं तत्त्व-विद्याभियुक्ताः।
चेतोवासे भवसि च मम स्फारमुद्भासमान-
स्तस्मिन्नंहः कथमिव तमो वस्तुतो वस्तुमीष्टे॥

वीतराग प्रभु के चरणों में, सविनय शीश झुकाते हैं।
'एकीभाव' से जिनवन्दन की, महिमा के गुण गाते हैं॥

पापवर्ग का अँधयारा, चिर से हरते तुम सारा।
यथा तत्त्वज्ञानी कहते, ज्ञान-जोतमय तुम रहते॥
मेरे मन मन्दिर में हो, सदा प्रकाशित रहते हो।
जहाँ आप रहते ऐसे, अघतम वहाँ रुके कैसे?॥
वादिराज मुनि की रचना को, श्रद्धा सुमन चढ़ाते हैं।
वृषभनाथ को करके नमोऽस्तु, सब जग को महकाते हैं॥

ॐ ह्रीं पापसमूहनाशक-केवलज्ञानज्योति-लाभाय श्रीवृषभनाथजिनेन्द्राय अर्घ्यं...।

३. रोग नाशक

आनन्दाश्रु-स्नपितवदनं गद्गदं चाभिजल्पन्
यश्चायेत त्वयि दृढमनाः स्तोत्रमंत्रैर्भवन्तम्।
तस्याभ्यस्तादपि च सुचिरं देहवल्मीकमध्यान्-
निष्कास्यन्ते विविध-विषमव्याधयः काद्रवेयाः॥
वीतराग प्रभु के चरणों में, सविनय शीश झुकाते हैं।
'एकीभाव' से जिनवन्दन की, महिमा के गुण गाते हैं॥
हर्ष आँसुओं से मुख धो, अन्तर्मन से गद्गद् हो।
थिर मन जो तुममें रखते, स्तोत्र मंत्र से थुति करते॥
चिर परिचित उनके सारे, साँप-रोग बहु विष धारे।
तन-वामी से भग जाएँ, भक्त निरोगी बन जाएँ॥
वादिराज मुनि की रचना को, श्रद्धा सुमन चढ़ाते हैं।
वृषभनाथ को करके नमोऽस्तु, सब जग को महकाते हैं॥

ॐ ह्रीं बहुरोगकारणनाशक-दृढ़भक्तियुत्-मनलाभाय श्रीवृषभनाथ-जिनेन्द्राय अर्घ्यं...।

४. सुन्दर रूप कारक

प्रागेवेह त्रिदिवभवनादेष्यता भव्यपुण्यात्-
पृथ्वीचक्रं कनकमयतां देव! निन्येत्वयेदम्।
ध्यानद्वारं ममरुचिकरं स्वान्तगेहं प्रविष्टस्-
तत्किं चित्रं जिन! वपुरिदं यत्सुवर्णी-करोषि॥
वीतराग प्रभु के चरणों में, सविनय शीश झुकाते हैं।
'एकीभाव' से जिनवन्दन की, महिमा के गुण गाते हैं॥
भव्य जनों के पुण्यों से, आए धरा पर स्वर्गों से।

आने से पहले धरती, सोने सी तुमने कर दी॥
ध्यान-द्वार से आने से, मन मन्दिर वस जाने से।
यदि काया हो कंचन सी, रही बात क्या विस्मय की॥
वादिराज मुनि की रचना को, श्रद्धा सुमन चढ़ाते हैं।
वृषभनाथ को करके नमोऽस्तु, सब जग को महकाते हैं॥

ॐ ह्रीं कायाकंचनमयकारक-सद्भक्तिपुण्य-लाभाय श्रीवृषभनाथजिनेन्द्राय अर्घ्यं...।

५. सर्व हितकारक

लोकस्यैकस्त्वमसि भगवन्! निर्निमित्तेन बन्धुस्-
त्वय्येवासौ सकलविषया शक्तिरप्रत्यनीका।
भक्तिस्फीतां चिरमधिवसन्मामिकां चित्तशय्यां
मय्युत्पन्नं कथमिव ततः क्लेशयूथं सहेथाः॥
वीतराग प्रभु के चरणों में, सविनय शीश झुकाते हैं।
'एकीभाव' से जिनवन्दन की, महिमा के गुण गाते हैं॥
स्वार्थ बिना सारे जग के, एक बन्धु तुम हम सबके।
और शक्ति जो जग ज्ञाता, रहे आपमें बिन बाधा॥
तो भक्तीमय मन मेरा, उस पर प्रभु का है डेरा।
मुझमें जन्मे चिर दुख-घर, कैसे सहो आप उस पर॥
वादिराज मुनि की रचना को, श्रद्धा सुमन चढ़ाते हैं।
वृषभनाथ को करके नमोऽस्तु, सब जग को महकाते हैं॥

ॐ ह्रीं जगत्-हितैषी-अकारण-बन्धुसम श्रीवृषभनाथजिनेन्द्राय अर्घ्यं...।

६. संसार भय नाशक

जन्माटव्यां कथमपि मया देव! दीर्घं भ्रमित्वा,
प्राप्तैवेयं तव नयकथा स्फारपीयूषवापी।
तस्या मध्ये हिमकर हिमव्यूहशीतेनितान्तं,
निर्मग्नं मां न जहति कथं दुःख-दावोपतापाः॥
वीतराग प्रभु के चरणों में, सविनय शीश झुकाते हैं।
'एकीभाव' से जिनवन्दन की, महिमा के गुण गाते हैं॥
चिर से भव-वन में भटका, फिर मुझको नय रूप कथा।
सुधा-वापिका भरी हुई, कठिनाई से प्राप्त हुई॥

चन्द्र बर्फ से शीतल यह, सदा डूबकर उसमें रह।
ज्वाला मुझको भव-दुख की, आखिर क्यों ना वह तजती॥
वादिराज मुनि की रचना को, श्रद्धा सुमन चढ़ाते हैं।
वृषभनाथ को करके नमोऽस्तु, सब जग को महकाते हैं॥
ॐ ह्रीं भववन-भ्रमणनाशक-अमृतवाणी-लाभाय श्रीवृषभनाथजिनेन्द्राय अर्घ्यं...।

७. सौभाग्य दायक

पादन्यासादपि च पुनतो यात्रया ते त्रिलोकीं,
हेमाभासो भवति सुरभिः श्रीनिवासश्च पद्मः।
सर्वाङ्गेण स्पृशति भगवंस्त्वय्यशेषं मनो मे,
श्रेयः किं तत्स्वयमहरहर्यन्नमामभ्युपैति॥
वीतराग प्रभु के चरणों में, सविनय शीश झुकाते हैं।
'एकीभाव' से जिनवन्दन की, महिमा के गुण गाते हैं॥
विहार से जग शुद्ध किए, जहाँ मात्र पद न्यास किए।
कंचन से सब कमल खिले, सुरभित श्री के धाम मिले॥
तब फिर तुमको हे भगवन्!, छूकर मेरा सब तन-मन।
स्वयं कौन सा श्रेय यथा, मुझे प्राप्त ना होय सदा॥
वादिराज मुनि की रचना को, श्रद्धा सुमन चढ़ाते हैं।
वृषभनाथ को करके नमोऽस्तु, सब जग को महकाते हैं॥
ॐ ह्रीं अनियतगगनविहारी-त्रैलोकीनाथ श्रीवृषभनाथजिनेन्द्राय अर्घ्यं...।

८. अनुपम सुख दायक

पश्यन्तं त्वद्वचनममृतं भक्तिपात्र्या पिबन्तं,
कर्मारण्यात्-पुरुष-मसमानन्दधाम प्रविष्टम्।
त्वां दुर्वारस्मरमदहरं त्वत्प्रसादैक भूमिं,
क्रूराकाराः कथमिवरुजा कण्टका निर्लुठन्ति॥
वीतराग प्रभु के चरणों में, सविनय शीश झुकाते हैं।
'एकीभाव' से जिनवन्दन की, महिमा के गुण गाते हैं॥
भव-वन तज सुख प्राप्त किया, दुर्जय रति को नाश किया।
ऐसे भगवन को लखकर, भक्ति-पात्र को फिर कर कर॥
तव वचनामृत जो पीते, तव प्रसाद पाकर जीते।

रोग भयंकर डंक उसे, पीड़ा दे सकते कैसे?॥
वादिराज मुनि की रचना को, श्रद्धा सुमन चढ़ाते हैं।
वृषभनाथ को करके नमोऽस्तु, सब जग को महकाते हैं॥
ॐ ह्रीं कामदेव-मदनाशक-अनुपमसुख-धामाय श्रीवृषभनाथजिनेन्द्राय अर्घ्यं...।

९. दृष्टि विकार नाशक

पाषाणात्मा तदितरसमः केवलं रत्नमूर्ति-
र्मानस्तम्भो भवति च परस्तादृशो रत्नवर्गः।
दृष्टि-प्राप्तो हरति स कथं मानरोगं नराणां,
प्रत्यासत्तिर्यदि न भवतस्तस्य तच्छक्तिहेतुः॥
वीतराग प्रभु के चरणों में, सविनय शीश झुकाते हैं।
'एकीभाव' से जिनवन्दन की, महिमा के गुण गाते हैं॥
मानस्तंभ पत्थर का जो, अन्य पत्थरों जैसा वो।
रत्नमयी पर-रत्नों सा, मानस्तंभ होता एसा॥
अगर आपका रूप वहाँ, शक्ति हेतु ना होय वहाँ।
उसके दर्शन लोगों के, मान-रोग हरता कैसे?॥
वादिराज मुनि की रचना को, श्रद्धा सुमन चढ़ाते हैं।
वृषभनाथ को करके नमोऽस्तु, सब जग को महकाते हैं॥
ॐ ह्रीं मानरोगनाशक-निर्मलदृष्टि-लाभाय श्रीवृषभनाथजिनेन्द्राय अर्घ्यं...।

१०. परम-उपकारक

हृद्यः प्राप्तो मरुदपि भवन्मूर्तिशैलोपवाही,
सद्यः पुंसां निरवधिरुजा धूलिबन्धं धुनोति।
ध्यानाहूतो हृदयकमलं यस्य तु त्वं प्रविष्टस्-
तस्याशक्यः क इह भुवने देव! लोकोपकारः॥
वीतराग प्रभु के चरणों में, सविनय शीश झुकाते हैं।
'एकीभाव' से जिनवन्दन की, महिमा के गुण गाते हैं॥
तव-तन-गिरि के पास रही, पवन मनोहर प्राप्त बही।
रोग धूल बिन सीमा की, पुरुष बन्ध हरती जल्दी॥
तुम्हें ध्यान में लाते जो, उर में तुम्हें वसाते जो।
उन्हें जगत में कौन यहाँ, जग उपकार अशक्य रहा॥

वादिराज मुनि की रचना को, श्रद्धा सुमन चढ़ाते हैं।
वृषभनाथ को करके नमोऽस्तु, सब जग को महकाते हैं॥

ॐ ह्रीं भव्यजीवोपकारी-ममहृदये-स्थित श्रीवृषभनाथजिनेन्द्राय अर्घ्यं...।

११. आश्रय दायक

जानासि त्वं मम भव भवे यच्च यादृक्च दुःखं,
जातं यस्य स्मरणमपि मे शस्त्रवन्निष्पिनष्टि।
त्वं सर्वेशः सकृप इति च त्वामुपेतोऽस्मि भक्त्या,
यत्कर्तव्यं तदिह विषये देव एव प्रमाणम्॥

वीतराग प्रभु के चरणों में, सविनय शीश झुकाते हैं।
'एकीभाव' से जिनवन्दन की, महिमा के गुण गाते हैं॥

मुझे मिले दुख भव-भव जो, उन्हें जानते हो तुम तो।
याद मात्र उनकी मुझको, शस्त्रों सी दुख दे मुझको॥
हो सर्वेश दयालू तुम, शरण भक्तिवश आए हम।
इसमें करना जो कर दो, हो प्रमाण जिनवर तुम तो॥

वादिराज मुनि की रचना को, श्रद्धा सुमन चढ़ाते हैं।
वृषभनाथ को करके नमोऽस्तु, सब जग को महकाते हैं॥

ॐ ह्रीं भव्यजीव-शरणागत-परमदयालु-जगस्वामी श्रीवृषभनाथजिनेन्द्राय अर्घ्यं...।

१२. परम-उद्धारक

प्रापद्वैवं तवनुतिपदै र्जीवकेनोपदिष्टैः,
पापाचारी मरणसमये सारमेयोऽपि सौख्यम्।
कः संदेहो यदुपलभते वासवश्रीप्रभुत्वं,
जल्पन् जाप्यैर्मणिभिरमलैस्त्वन्नमस्कारचक्रम्॥

वीतराग प्रभु के चरणों में, सविनय शीश झुकाते हैं।
'एकीभाव' से जिनवन्दन की, महिमा के गुण गाते हैं॥

नमस्कार जिनपद प्यारा, जीवन्धर वह उच्चारा।
मरण समय पापी सुनकर, कुत्ता पाया सुर-सुख-घरा॥
तो शुचि मणिमाला द्वारा, महामंत्र जपकर प्यारा।
सुरपति का वैभव पाए, तो संदेह रहा क्या ये॥

वादिराज मुनि की रचना को, श्रद्धा सुमन चढ़ाते हैं।

वृषभनाथ को करके नमोऽस्तु, सब जग को महकाते हैं॥

ॐ ह्रीं पतितोद्धारक-शतामरेन्द्र-वन्दनीय श्रीवृषभनाथजिनेन्द्राय अर्घ्यं...।

१३. ऋद्धि-सिद्धि दायक

शुद्धे ज्ञाने शुचिनि चरिते सत्यपि त्वय्यनीचा,
भक्तिर्नो चेदनवधि-सुखा वञ्चिका कुञ्चिकेयम्।
शक्योद्घाटं भवति हि कथं मुक्ति-कामस्य पुंसो-
मुक्तिद्वारं परिदृढ़-महामोह-मुद्रा-कवाटम्॥

वीतराग प्रभु के चरणों में, सविनय शीश झुकाते हैं।
'एकीभाव' से जिनवन्दन की, महिमा के गुण गाते हैं॥

ज्ञान चरण निर्मल होवे, श्रेष्ठ भक्ति यदि ना होवे।
बिन सीमा सुख की ताली, पूज्य आपकी गुणवाली॥
तो शिव-द्वारे का ताला, बंद मोह-दृढ़ता वाला।
पाने वाले मोक्ष उसे, कैसे खोलें शीघ्र उसे॥

वादिराज मुनि की रचना को, श्रद्धा सुमन चढ़ाते हैं।
वृषभनाथ को करके नमोऽस्तु, सब जग को महकाते हैं॥

ॐ ह्रीं रत्नत्रयरूप-मोक्षलक्ष्मीप्रदायक-सद्भक्तिलाभाय श्रीवृषभनाथ-जिनेन्द्राय अर्घ्यं...।

१४. ज्ञान ज्योति प्रदायक

प्रच्छन्नः खल्वय-मघ-मयै-रन्धकारैः समन्तात्-
पन्था मुक्तेः स्थपुटित-पदः क्लेश-गर्तैरगाधैः।
तत्कस्तेन व्रजति सुखतो देव! तत्त्वावभासी,
यद्यग्रेऽग्रे न भवति भवद्-भारतीरत्न-दीपः॥

वीतराग प्रभु के चरणों में, सविनय शीश झुकाते हैं।
'एकीभाव' से जिनवन्दन की, महिमा के गुण गाते हैं॥

सभी ओर से शिव पथ को, ढके हुए हैं अघ-तम तो।
गहरे दुख गर्त्तों द्वारा, विषम बना है वह प्यारा॥
वाणी दीपक तत्त्व अगर, अग्र-अग्र ना होवे फिर।
मोक्षमार्ग यों होने पर, सुख से कौन चले उस पर॥

वादिराज मुनि की रचना को, श्रद्धा सुमन चढ़ाते हैं।
वृषभनाथ को करके नमोऽस्तु, सब जग को महकाते हैं॥

ॐ ह्रीं पापतिमिरनाशक-जीवादितत्त्वोपदेशीवाणी-प्रदायक श्रीवृषभनाथ-जिनेन्द्राय अर्घ्यं...।

१५. आनन्द दायक

आत्मज्योति - र्निधि - रनवधि - र्द्रष्टुरानन्दहेतुः
कर्मक्षोणीपटलपिहितो योऽनवाप्यः परेषाम्।
हस्ते कुर्वन्त्यनति चिरतस्तं भवद् भक्तिभाजः
स्तोत्रैर्बंध-प्रकृति- परुषोद्दाम-धात्री-खनित्रैः॥

वीतराग प्रभु के चरणों में, सविनय शीश झुकाते हैं।
'एकीभाव' से जिनवन्दन की, महिमा के गुण गाते हैं॥

निज वैभव जो छिपा हुआ, विधि पटलों से ढका हुआ।
सुख का कारण ज्ञानी को, पाते ना अज्ञानी वो॥
किन्तु भक्त जो जिनवर के, स्तोत्र कुदाली को लेके।
खोदें सब विधि ठोस धरा, पाएँ वैभव आत्म खरा॥

वादिराज मुनि की रचना को, श्रद्धा सुमन चढ़ाते हैं।
वृषभनाथ को करके नमोऽस्तु, सब जग को महकाते हैं॥

ॐ ह्रीं आत्मज्योतिर्निधि-आनन्दहेतु श्रीवृषभनाथजिनेन्द्राय अर्घ्यं...।

१६. विशुद्धि प्रदायक

प्रत्युत्पन्ना नय-हिमगिरेरायता चामृताब्धेर्,
यादेव त्वत्पद-कमलयोः सङ्गता भक्ति-गङ्गा।
चेतस्तस्यां मम रुचि-वशादाप्लुतं क्षालितांहः
कल्माषं यद् भवति किमियं देव! सन्देहभूमिः॥

वीतराग प्रभु के चरणों में, सविनय शीश झुकाते हैं।
'एकीभाव' से जिनवन्दन की, महिमा के गुण गाते हैं॥

ज्ञान हिमालय से जन्मीं, मोक्ष सिन्धु तक जो लम्बी।
चरण कमल तव भक्तिमयी, हमको गंगा प्राप्त हुई॥
जिसमें श्रद्धा से मम मन, पूरा डूबा जो अघतम।
सब कल्मष धुलता जिसमें, क्या संदेह धाम इसमें॥

वादिराज मुनि की रचना को, श्रद्धा सुमन चढ़ाते हैं।
वृषभनाथ को करके नमोऽस्तु, सब जग को महकाते हैं॥

ॐ ह्रीं पापमलनाशक-स्याद्वादनयगंगा-प्रदायक श्रीवृषभनाथजिनेन्द्राय अर्घ्यं...।

१७. मनोकामना पूरक

प्रादुर्भूत-स्थिर-पद - सुख त्वामनुध्यायतो मे
त्वय्येवाहं स इति मतिरुत्पद्यते निर्विकल्पा।
मिथ्यैवेयं तदपि तनुते तृप्ति-मभ्रेषरूपाम्
दोषात्मानोऽप्यभिमतफलास्त्वत्प्रसादाद् भवन्ति॥

वीतराग प्रभु के चरणों में, सविनय शीश झुकाते हैं।
'एकीभाव' से जिनवन्दन की, महिमा के गुण गाते हैं॥

अचल मोक्ष सुख जो पाए, वीतराग प्रभु कहलाए।
तुमको ऐसा मैं ध्याऊँ, जो तुम वह मैं मति लाऊँ॥
यद्यपि ऐसा सत्य नहीं, फिर भी थिर सुख करे यही।
कृपा सदोषी जन को भी, इच्छित फल देती वो ही॥

वादिराज मुनि की रचना को, श्रद्धा सुमन चढ़ाते हैं।
वृषभनाथ को करके नमोऽस्तु, सब जग को महकाते हैं॥

ॐ ह्रीं अभिमतफल-मोक्षसुख-लाभाय श्रीवृषभनाथजिनेन्द्राय अर्घ्यं...।

१८. निर्मलता दायक

मिथ्यावादं मल - मपनुदन् - सप्तभङ्गीतरङ्गै-
र्वागम्भोधिर्भुवनमखिलं देव! पर्येति यस्ते।
तस्यावृत्तिं सपदि विबुधाश्चेतसैवाचलेन,
व्यातन्वन्तः सुचिर-ममृता-सेवया तृप्नुवन्ति॥

वीतराग प्रभु के चरणों में, सविनय शीश झुकाते हैं।
'एकीभाव' से जिनवन्दन की, महिमा के गुण गाते हैं॥

वचन रूप सागर प्यारा, व्याप्त सभी जग में न्यारा।
सप्तभंग लहरों वाला, मिथ्यामल धोने वाला॥
अपने मन को पर्वत कर, उसका मन्मथ सुरगण कर।
अमृत सेवन झट करके, चिर तक तुष्ट-पुष्ट रहते॥

वादिराज मुनि की रचना को, श्रद्धा सुमन चढ़ाते हैं।
वृषभनाथ को करके नमोऽस्तु, सब जग को महकाते हैं॥

ॐ ह्रीं मिथ्यामलनाशक-अनेकान्तवाणी-लाभाय श्रीवृषभनाथजिनेन्द्राय अर्घ्यं...।

१९. सर्व-सौख्य दायक

आहार्य्येभ्यः स्पृहयति परं यः स्वभावादहृद्यः,
शस्त्र-ग्राही भवति सततं वैरिणा यश्च शक्यः।
सर्वाङ्गेषु त्वमसि सुभगस्त्वं न शक्यः परेषां,
तत्किं भूषावसनकुसुमैः किं च शस्त्रैरुदस्त्रैः॥

वीतराग प्रभु के चरणों में, सविनय शीश झुकाते हैं।
'एकीभाव' से जिनवन्दन की, महिमा के गुण गाते हैं॥

जो खुद से सुन्दर ना हो, अलंकार से सजता वो।
जो शत्रू से भय खाए, वह शस्त्रों को अपनाये॥
सुन्दर तुम सर्वांग रहे, तुम्हें शत्रु ना जीत सके।
सो आभूषण वस्त्रों से, अर्थ रहा क्या शस्त्रों से॥

वादिराज मुनि की रचना को, श्रद्धा सुमन चढ़ाते हैं।
वृषभनाथ को करके नमोऽस्तु, सब जग को महकाते हैं॥

ॐ ह्रीं सर्वाङ्ग-सुभग-परमवीतरागी श्रीवृषभनाथजिनेन्द्राय अर्घ्यं...।

२०. भय-संकट हारक

इन्द्रः सेवां तव सुकुरुतां किं तया श्लाघनं ते,
तस्यैवेयं भव-लय-करीं श्लाघ्यता-मातनोति।
त्वं निस्तारी जनन-जलधेः सिद्धिकान्तापतिस्त्वं,
त्वं लोकानां प्रभुरिति तव श्लाघ्यते स्तोत्रमित्थम्॥

वीतराग प्रभु के चरणों में, सविनय शीश झुकाते हैं।
'एकीभाव' से जिनवन्दन की, महिमा के गुण गाते हैं॥

इन्द्र श्रेष्ठ सेवा करता, उससे प्रभु को क्या मिलता।
पर वह भव को नशा रही, इन्द्र प्रशंसा बढ़ा रही॥
भवसागर से तुम तिरके, पार हमें भी तुम करते।
मुक्तिरमा के तुम स्वामी, स्तोत्र आपका जगनामी॥

वादिराज मुनि की रचना को, श्रद्धा सुमन चढ़ाते हैं।
वृषभनाथ को करके नमोऽस्तु, सब जग को महकाते हैं॥

ॐ ह्रीं भवोदधितारक-सिद्धिकान्तापति श्रीवृषभनाथजिनेन्द्राय अर्घ्यं...।

२१. दीक्षा प्रदायक

वृत्तिर्वाचा - मपर - सदृशी न त्वमन्येनतुल्यः,
स्तुत्युद्गाराः कथमिव ततः त्वय्यमी नः क्रमन्ते।
मैवं भूवंस्तदपि भगवन्-भक्ति-पीयूष-पुष्टास्-
ते भव्यानामभिमत-फलाः पारिजाता भवन्ति॥

वीतराग प्रभु के चरणों में, सविनय शीश झुकाते हैं।
'एकीभाव' से जिनवन्दन की, महिमा के गुण गाते हैं॥

वचन हमारे अन्यों से, किन्तु आप ना अन्यों से।
थुति उद्गार हमारे सो, तुम तक पहुँचे कैसे वो॥
नहीं पहुँचने पर भी वो, भक्ति सुधामय पूरित जो।
कल्पवृक्ष सम मंगल वे, भव्यों को इच्छित फल दें॥

वादिराज मुनि की रचना को, श्रद्धा सुमन चढ़ाते हैं।
वृषभनाथ को करके नमोऽस्तु, सब जग को महकाते हैं॥

ॐ ह्रीं भव्यानाम्-अभिमतफलदायक-कल्पवृक्षसम श्रीवृषभनाथजिनेन्द्राय अर्घ्यं...।

२२. वैर-भाव नाशक

कोपावेशो न तव क्वापि देव! प्रसादो,
व्याप्तं चेतस्तव हि परमोपेक्षयैवानपेक्षम्।
आज्ञावश्यं तदपि भुवनं सन्निधि-वैंर-हारी,
क्वैवंभूतं भुवन-तिलकं! प्राभवं त्वत्परेषु॥

वीतराग प्रभु के चरणों में, सविनय शीश झुकाते हैं।
'एकीभाव' से जिनवन्दन की, महिमा के गुण गाते हैं॥

नहीं किसी पर क्रोध कृपा, स्वार्थ रहित तव चित्त रहा।
परम उपेक्षामय वह है, फिर भी आज्ञावश जग है॥
तीन लोक के तिलक रहे, शरण आपकी वैर हरे।
नाथ! आपकी महिमा ज्यों, कहाँ रही अन्यों में त्यों॥

वादिराज मुनि की रचना को, श्रद्धा सुमन चढ़ाते हैं।
वृषभनाथ को करके नमोऽस्तु, सब जग को महकाते हैं॥

ॐ ह्रीं कषायभाव-नाशक-त्रैलोकतिलक श्रीवृषभनाथजिनेन्द्राय अर्घ्यं...।

२३. शुद्धात्म प्रदायक

देव! स्तोतुं त्रिदिव गणिका-मण्डलीगीत-कीर्तिं,
तोतूर्ति त्वां सकल-विषय-ज्ञान-मूर्तिं जनो यः।
तस्य क्षेमं न पदमटतो जातु जोहूर्ति पन्था-
स्तत्त्वग्रन्थ-स्मरण-विषये नैष मोमूर्ति मर्त्यः॥

वीतराग प्रभु के चरणों में, सविनय शीश झुकाते हैं।
'एकीभाव' से जिनवन्दन की, महिमा के गुण गाते हैं॥

यश देवीगण नित गाएँ, जग ज्ञाता जो कहलाएँ।
तव थुति जल्दी जो करता, और मुक्ति पाने चलता॥
वह शिव-पथ पर चले जहाँ, टेड़ा पथ ना होय वहाँ।
तत्त्व ग्रन्थ के चिन्तन में, मूर्च्छित ना हो भव वन में॥

वादिराज मुनि की रचना को, श्रद्धा सुमन चढ़ाते हैं।
वृषभनाथ को करके नमोऽस्तु, सब जग को महकाते हैं॥

ॐ ह्रीं सकलविषय-ज्ञानमूर्ति श्रीवृषभनाथजिनेन्द्राय अर्घ्यं...।

२४. कल्याण-कारक

चित्ते कुर्वन् निरवधिसुखज्ञानदृग्वीर्यरूपं,
देव! त्वां यः समय - नियमादादरेण स्तवीति।
श्रेयोमार्गं स खलु सुकृती तावता पूरयित्वा,
कल्याणानां भवति विषयः पञ्चधापञ्चितानाम्॥

वीतराग प्रभु के चरणों में, सविनय शीश झुकाते हैं।
'एकीभाव' से जिनवन्दन की, महिमा के गुण गाते हैं॥

वीर्यज्ञान दर्शन सुखमय, नाथ! अनन्त चतुष्टयमय।
रूप आपका हृदय धरें, यथा समय थुति विनय करें॥
बस इतना जो जन करते, शिवपथ वे पूरा करके।
और पंचकल्याणक के, पात्र बनें शिव साधक वे॥

वादिराज मुनि की रचना को, श्रद्धा सुमन चढ़ाते हैं।
वृषभनाथ को करके नमोऽस्तु, सब जग को महकाते हैं॥

ॐ ह्रीं पंचकल्याणकसंयुक्त-अनन्तचतुष्टय-शोभित श्रीवृषभनाथजिनेन्द्राय अर्घ्यं...।

२५. अनन्त स्वरूप प्रदायक

भक्ति -प्रह्वमहेन्द्र - पूजित-पद! त्वत्कीर्तने न क्षमाः-
सूक्ष्म - ज्ञान - दृशोऽपि संयमभृतः के हन्त मन्दा वयम्।
अस्माभिः स्तवनच्छलेन तु परस्त्वय्यादरस्तन्यते,
स्वात्माधीन-सुखैषिणां स खलु नः कल्याण-कल्पद्रुमः॥

वीतराग प्रभु के चरणों में, सविनय शीश झुकाते हैं।
'एकीभाव' से जिनवन्दन की, महिमा के गुण गाते हैं॥
इन्द्र पूज्य 'जिन' गुण गाने, समर्थ ना योगी माने।
सूक्ष्म ज्ञानदृग जो पावें, खेद! मन्द मति क्या गावें॥
फिर भी थुति के छल से जो, श्रेष्ठ विनय हम करते वो।
निज सुख के इच्छुक हमको, मंगल कल्पवृक्ष सम हो॥
वादिराज मुनि की रचना को, श्रद्धा सुमन चढ़ाते हैं।
वृषभनाथ को करके नमोऽस्तु, सब जग को महकाते हैं॥

ॐ ह्रीं स्वकीय-आत्मिकसुख-लाभाय श्रीवृषभनाथजिनेन्द्राय अर्घ्यं...।

२६. उपसंहार

वादिराजमनु शाब्दिक-लोको, वादिराजमनु तार्किकसिंहः।
वादिराजमनु काव्यकृतस्ते, वादिराजमनु भव्य-सहायः॥

(त्रिभंगी सम ३२ मात्रिक)

जो शाब्दिक ज्ञाता, जग विख्याता, वादिराज से हीन सभी।
जो तार्किक ज्ञाता, जग विख्याता, वादिराज से हीन सभी॥
जो काव्य रचाते, श्रेष्ठ कहाते, वादिराज से हीन सभी।
भवि मित्र कहाते, साथ निभाते, वादिराज से हीन सभी॥

ॐ ह्रीं प्रसिद्धकवि-आचार्य वादिराज वन्दित श्रीवृषभनाथजिनेन्द्राय अर्घ्यं...।

जाप्य मंत्र—ॐ ह्रीं श्रीं क्लीं अर्हं श्रीवृषभनाथजिनेन्द्राय नमो नमः।

जयमाला

(दोहा)

वृषभनाथ भगवान को, वादिराज गुरु पूज।
जिन महिमा दर्शा रहे, कर नमोऽस्तु की गूँज॥

(ज्ञानोदय)

जिन्हें रोग दुख बहुत सताएँ, जिन्हें पराजय का डर हो।

जिन्हें धर्म पर श्रद्धा ना हो, जिन्हें सजाना निज घर हो॥
ऐसे जन भयभीत नहीं हों, खेद खिन्न ना चिंतित हों।
एकीभाव पर श्रद्धा रखकर, वृषभनाथ के आश्रित हों॥१॥
जैसे वादिराज मुनिवर को, कर्मोदय से कुष्ट हुआ।
समता से सब सहते मुनिवर, पर विद्रोही रुष्ट हुआ॥
तब जयसिंह चौलुक्य सभा में, उसने मुनि उपहास किया।
'जैन साधु कोड़ी होते हैं', ऐसा कुछ अपमान किया॥२॥
पर राजा यह सह न सके सो, गुरु को व्यथा सुना डाली।
एकीभाव की रचना तब तो, गुरु ने शीघ्र रचा डाली॥
वृषभनाथ की पूज्य भक्ति कर, निज काया चमका डाली।
हुआ रातभर में यह अतिशय, सुबह सुनहरी सी लाली॥३॥
राजा ने द्वेषी को डाँटा, कहो कहाँ से कुष्ट दिखे।
द्वेषी हुआ शर्म से लज्जित, पर गुरु ना संतुष्ट दिखे॥
मेरा तन तो कोड़ी ही था, किंतु इसे चमका डाले।
थोड़ा बचा कनिष्ठा में सो, अँगुली शीघ्र दिखा डाले॥४॥
एकीभाव से वृषभनाथ का, वादिराज यह फल पाए।
सबने जैनधर्म स्वीकारा, जिनशासन सब चमकाए॥
मुनि 'सुव्रत' की यही प्रार्थना, धर्म ध्वजा हम फहराएँ।
रोग शोक हर विश्व शान्ति हो, मंगल गीत सभी गाएँ॥५॥

(दोहा)

एकीभाव स्तोत्र से, बढ़े धर्म की शान।
नमोऽस्तु का फल सुख मिले, वृषभनाथ भगवान॥

ॐ ह्रीं श्रीं क्लीं अर्हं एकीभाव स्तोत्र-आराध्य श्रीवृषभनाथजिनेन्द्राय अनर्घपद-प्राप्तये जयमाला पूर्णार्घ्यं...।

वृषभनाथ स्वामी करें, विश्वशान्ति कल्याण।
प्रासुक जल की धार दे, हम पूजत भगवान॥

(शान्तये शान्तिधारा)

कल्पवृक्ष के पुष्प सम, पुष्पांजलि पद लाए।
भव दुःखों को मेंट दो, वृषभनाथ जिनराय॥

(पुष्पांजलिं....)

===

श्री विषापहारस्तोत्र विधान

ईसा की आठवीं शताब्दी में महाकवि धनञ्जय द्वारा जिनेन्द्रभक्ति में रची गई श्रेष्ठ रचना है। इस स्तोत्र में ४० काव्य हैं। इस स्तोत्र के सम्बन्ध में कहा जाता है कि कवि के पुत्र को सर्प ने डँस लिया था, अतः सर्पविष को दूर करने के लिए ही इस स्तोत्र की रचना की गई थी।

स्थापना (ज्ञानोदय)

जिनभक्ति से रचे धनञ्जय, विषापहार स्तोत्र महा।
पुत्र सर्प विष मुक्त हुआ सो, जिनमहिमा सम कौन यहाँ॥
महाकवि सम करें अर्चना, रत्नत्रय के पुत्र मिलें।
भक्त-महल में राज करें प्रभु, कर्मों के दुख जहर टलें॥

(दोहा)

भक्तों की सुन प्रार्थना, हृदय पधारो नाथ।
हम जिनवर को पूज लें, कर नमोऽस्तु नत माथ॥

ॐ ह्रीं श्रीं क्लीं अर्हं विषापहार-स्तोत्र-आराध्य श्रीजिनेन्द्र! अत्र अवतर-अवतर...। अत्र तिष्ठ-तिष्ठ ठः ठः...। अत्र मम सन्निहितो भव-भव वषट्...। (पुष्पांजलिं...)

(सखी)

श्री जिनवर प्रभु की श्रद्धा, सम्पूर्ण करे हर इच्छा।
सो जल द्वारा हम पूजें, सुख विषापहार सा खोजें॥

ॐ ह्रीं श्रीं क्लीं अर्हं विषापहार-स्तोत्र-आराध्य श्रीजिनेन्द्राय जन्म-जरा-मृत्यु विनाशनाय जलं...।

श्री जिनवर की यश गाथा, संताप हरे दे साता।
सो चंदन से हम पूजें, सुख विषापहार सा खोजें॥

ॐ ह्रीं श्रीं क्लीं अर्हं विषापहार-स्तोत्र-आराध्य श्रीजिनेन्द्राय संसारतापविनाशनाय चंदनं...।

श्री जिनवर प्रभु के अतिशय, भव हरे बना दे अक्षय।
सो अक्षत से हम पूजें, सुख विषापहार सा खोजें॥

ॐ ह्रीं श्रीं क्लीं अर्हं विषापहार-स्तोत्र-आराध्य श्रीजिनेन्द्राय अक्षयपदप्राप्ताय अक्षतान्...।

श्री जिनवर प्रभु की वाणी, दे ब्रह्मचर्य कल्याणी।
सो पुष्प चढ़ा हम पूजें, सुख विषापहार सा खोजें॥

ॐ ह्रीं श्रीं क्लीं अर्हं विषापहार-स्तोत्र-आराध्य श्रीजिनेन्द्राय कामबाणविध्वंसनाय पुष्पाणि...।

श्री जिनवर प्रभु की सेवा, दे निजानंद का मेवा।
नैवेद्य चढ़ा हम पूजें, सुख विषापहार सा खोजें॥

ॐ ह्रीं श्रीं क्लीं अर्हं विषापहार-स्तोत्र-आराध्य विषापहार-स्तोत्र-आराध्य श्रीजिनेन्द्राय क्षुधारोगविनाशनाय नैवेद्यं...।

श्री जिनवर प्रभु के मोती, दे मोह-हरण की ज्योति।
सो दीप जला हम पूजें, सुख विषापहार सा खोजें॥

ॐ ह्रीं श्रीं क्लीं अर्हं विषापहार-स्तोत्र-आराध्य श्रीजिनेन्द्राय मोहान्धकारविनाशनाय दीपं...।

श्री जिनवर प्रभु की भक्ति, दे कर्म काटने शक्ति।
सो धूप चढ़ा हम पूजें, सुख विषापहार सा खोजें॥

ॐ ह्रीं श्रीं क्लीं अर्हं विषापहार-स्तोत्र-आराध्य श्रीजिनेन्द्राय अष्टकर्मदहनाय धूपं...।

श्री जिनवर प्रभु की बगिया, दे मोक्ष महाफल बढ़िया।
सो फल द्वारा हम पूजें, सुख विषापहार सा खोजें॥

ॐ ह्रीं श्रीं क्लीं अर्हं विषापहार-स्तोत्र-आराध्य श्रीजिनेन्द्राय मोक्षफलंप्राप्तये फलं...।

श्री जिनवर प्रभु की आस्था, कर देती ज्ञाता-दृष्टा।
सो अर्घ्य चढ़ा हम पूजें, सुख विषापहार सा खोजें॥

ॐ ह्रीं श्रीं क्लीं अर्हं विषापहार-स्तोत्र-आराध्य श्रीजिनेन्द्राय अनर्घपदप्राप्तये अर्घ्यं...।

अर्घ्यावली

(दोहा)

वृषभप्रभु विद्यागुरु, जिन्हें नमन कर याद।
करता विषापहार का, भक्ति सहित अनुवाद॥

(पुष्पांजलिं...)

(उपजाति)

१. आप ही शरण

स्वात्मस्थितः सर्वगतः समस्तव्यापारवेदी विनिवृत्तसङ्गः।
प्रवृद्धकालोप्यजरो वरेण्यः पायादपायात्पुरुषः पुराणः॥

(ज्ञानोदय)

निज स्वरूप में थित होकर भी, यत्र तत्र सर्वत्र रहे।
सब कुछ जानें देखें लेकिन, जो परिग्रह से मुक्त रहे।
दीर्घ आयु वाले होकर भी, वृद्ध-दशा बिन श्रेष्ठ रहे।

हमें बचाएँ जो पापों से, वे पुरुदेवा इष्ट रहे॥

ॐ ह्रीं सर्वजीव शरणरूप विषापहार-स्तोत्र-आराध्य श्रीजिनेन्द्राय अर्घ्यं...।

२. अचिन्त्य योगी

परैरचिन्त्यं युगभारमेकः स्तोतुं वहन्योगिभिरप्यशक्यः।
स्तुत्योऽद्य मेऽसौ वृषभो न भानोः किमप्रवेशे विशति प्रदीपः॥

अचिंत्य हैं जो अन्य जनों से, सहे अकेले जगत् व्यथा।
योगीजन भी शक्य न जिनकी, कह पाने में पूर्ण कथा॥
ऐसे वृषभनाथ प्रभु की मैं, यश गाथा गाऊँ ऐसे।
सूर्य जहाँ पर पहुँच न पाए, दीप वहाँ पहुँचे जैसे॥

ॐ ह्रीं अचिन्त्ययोगी विषापहार-स्तोत्र-आराध्य श्रीजिनेन्द्राय अर्घ्यं...।

३. मेरे स्तुत्य

तत्याज शक्रः शकनाभिमानं नाहं त्यजामि स्तवनानुबन्धम्।
स्वल्पेन बोधेन ततोऽधिकार्थं वातायनेनेव निरूपयामि॥

कर न सके गुणगान इन्द्र तो, अपना बल अभिमान तजा।
किन्तु नहीं मैं उद्यम छोड़ूँ, कैसी भी अब मिले सजा॥
जैसे खिड़की में से बालक, गगन देखकर नाच रहा।
वैसे मैं भी अल्प ज्ञान से, भक्ति अर्थ बहु वाँच रहा॥

ॐ ह्रीं ममस्तुत्य विषापहार-स्तोत्र-आराध्य श्रीजिनेन्द्राय अर्घ्यं...।

४. वचन अगोचर

त्वं विश्वदृश्वा सकलैरदृश्यो विद्वानशेषं निखिलैरवेद्यः।
वक्तुं कियान्कीदृश इत्यशक्यः स्तुतिस्ततोऽशक्तिकथा तवास्तु॥

सकल विश्व तुम देख रहे पर, विश्व तुम्हें न देख सके।
सकल विश्व तुम जान रहे पर, विश्व तुम्हें न जान सके॥
कितने अथवा कैसे हो तुम , कह न सकूँ इसकी गाथा।
अतः कथा का बल ना मुझमें, तभी नवाऊँ मैं माथा॥

ॐ ह्रीं वचनागोचर विषापहार-स्तोत्र-आराध्य श्रीजिनेन्द्राय अर्घ्यं...।

५. निःस्वार्थ बालवैद्य

व्यापीडितं बालमिवात्मदोषै- रुल्लाघतां लोकमवापिपस्त्वं।
हिताहितान्वेषणमान्द्यभाजः सर्वस्य जन्तोरसि बालवैद्यः॥

नाथ! आपने बालक के ज्यों, दोष क्षमा कर मस्त किया।
त्यों जग की सब पीड़ाओं को, दूर किया जग स्वस्थ किया॥
भले-बुरे के विचार में तो, आप मूढ़ ही सिद्ध हुए।
किन्तु प्राणियों की रक्षा में, बालक वैद्य प्रसिद्ध हुए॥

ॐ ह्रीं निःस्वार्थ बालवैद्य विषापहार-स्तोत्र-आराध्य श्रीजिनेन्द्राय अर्घ्यं...।

६. शीघ्र फल प्रदाता

दाता न हर्ता दिवसं विवस्वानद्यश्व इत्यच्युत! दर्शिताशः।
सव्याजमेवं गमयत्यशक्तः क्षणेन दत्सेऽभिमतं नताय॥

हे! अच्युत जिनसूरज हमको, कभी न कुछ देते-लेते।
किन्तु! आजकल दिशा दिखाकर, हो असमर्थ विदा लेते॥
ऐसे ही बिन लिए दिए कुछ, छली सूर्य दिन खो देते।
किन्तु आप तो नम्र जनों को, इष्ट वस्तु पल में देते॥

ॐ ह्रीं शीघ्रफलप्रदाता विषापहार-स्तोत्र-आराध्य श्रीजिनेन्द्राय अर्घ्यं...।

७. दर्पणवत् वीतरागता

उपैति भक्त्या सुमुखः सुखानि त्वयि स्वभावाद्विमुखश्च दुःखं।
सदावदातद्युतिरेकरूपस्तयोस्त्वमादर्श इवावभासि॥

जिनवर के अनुकूल चले जो, वही भक्ति से सुख पाता।
अन्य पुरुष प्रतिकूल चले जो, वही स्वयं ही दुख पाता॥
किन्तु आप उन सुमुख-विमुख को, दर्पण जैसे चमक रहे।
कान्तिमान हो एक रूप हो, सब सेवा कर महक रहे॥

ॐ ह्रीं दर्पणवत् वीतरागी विषापहार-स्तोत्र-आराध्य श्रीजिनेन्द्राय अर्घ्यं...।

८. सर्वव्यापी

अगाधताब्धेः स यतः पयोधिर्मेरोश्च तुङ्गः प्रकृतिः स यत्र।
द्यावापृथिव्योः पृथुता तथैव व्यापत्वदीया भुवनान्तराणि॥

जहाँ सिन्धु गहराई वहीं पर, जहाँ मेरु उत ऊँचाई।
गगन धरा हो जहाँ वहीं पर, विशालता दे दिखलाई॥
किन्तु आपकी विशालता या, गहराई या ऊँचाई।
तीन-लोक में मिले तभी तो, पूजन करना चतुराई॥

ॐ ह्रीं सर्वव्यापी विषापहार-स्तोत्र-आराध्य श्रीजिनेन्द्राय अर्घ्यं...।

९. यथार्थ वस्तु प्रतिपादक

तवानवस्था परमार्थतत्त्वं त्वया न गीतः पुनरागमश्च।
दृष्टं विहाय त्वमदृष्टमैषीर्विरुद्धवृत्तोऽपि समञ्जसस्त्वं॥

परिवर्तनमय नियम आपके, किन्तु इष्ट अवतार नहीं।
अतः मोक्ष से पुनः जन्म का, दिया कभी संस्कार नहीं॥
इन्द्रिय सुख को छोड़ आपने, शाश्वत सुख को स्वीकारा।
अतः आप विपरीत हुए पर, समुचित मैंने स्वीकारा॥

ॐ ह्रीं यथार्थ वस्तुप्रतिपादक विषापहार-स्तोत्र-आराध्य श्रीजिनेन्द्राय अर्घ्यं...।

१०. काम विजयी

स्मरः सुदग्धो भवतैव तस्मिन् उद्धूलितात्मा यदि नाम शम्भुः।
अशेत वृन्दोपहतोऽपि विष्णुः किं गृह्यते येन भवानजागः॥

प्रथम काम हारा फिर उसने, संहारक को हरा दिया।
सृष्टिपाल ने श्रीदेवी से, प्रेरित हो बल गिरा दिया॥
किन्तु आपका कामदेव तो, बाल न बाँका कर पाया।
उलटे तुमने भस्म उसे कर, मुक्तिरमा को अपनाया॥

ॐ ह्रीं कामविजयी विषापहार-स्तोत्र-आराध्य श्रीजिनेन्द्राय अर्घ्यं...।

११. स्वतः गुणवान्

स नीरजाः स्यादपरोऽघवान्वा तद्दोषकीर्त्यैव न ते गुणित्वं।
स्वतोऽम्बुराशेर्महिमा न देव! स्तोकापवादेन जलाशयस्य॥

नाथ! आपकी खुद महिमा है, पर-निन्दा से तो न हुई।
रागी-द्वेषी परदेवों के, दोष कथन से भी न हुई॥
जैसे सागर की खुद महिमा, अपने आप स्वयं होती।
कहें अन्य को छोटा तो फिर, स्वयं प्रसंशा नहिं होती॥

ॐ ह्रीं स्वतः गुणवान् विषापहार-स्तोत्र-आराध्य श्रीजिनेन्द्राय अर्घ्यं...।

१२. कार्य-कारणज्ञ

कर्मस्थितिं जन्तुरनेक भूमिं नयत्यमुं सा च परस्परस्य।
त्वं नेतृभावं हि तयोर्भवाब्धौ जिनेन्द्र नौनाविकयोरिवाख्यः॥

जीव स्वयं ही कर्म दशा को, लेकर जाते यहाँ-वहाँ।
कर्मदशा भी स्वयं जीव को, लेकर जाती जहाँ-तहाँ।

नाव और नाविक बन दोनों, भवसागर में डूब रहे।
बने परस्पर दोनों नेता, ऐसा जिनवर खूब कहे॥

ॐ ह्रीं सर्वकार्यकारक विषापहार-स्तोत्र-आराध्य श्रीजिनेन्द्राय अर्घ्यं...।

१३. अज्ञ चेष्टा

सुखाय दुःखानि गुणाय दोषान् धर्माय पापानि समाचरन्ति।
तैलाय बालाः सिकतासमूहं निपीडयन्ति स्फुटमत्वदीयाः॥

जैसे बालक तेल प्राप्ति को, रेत-पेल दुख से रोते।
वैसे ही प्रतिकूल आपसे, बहिर्मुखी जो जन होते॥
सुख पाने को दुख करते हैं, धर्म प्राप्ति को पाप करें।
दोषाचरण करें गुण पाने, जीवन अपना नाश करें॥

ॐ ह्रीं अज्ञचेष्टा विषापहार-स्तोत्र-आराध्य श्रीजिनेन्द्राय अर्घ्यं...।

१४. विष हर्त्ता

विषापहारं मणिमौषधानि मन्त्रं समुद्दिश्य रसायनं च।
भ्राम्यन्त्यहो न त्वमिति स्मरन्ति पर्यायनामानि तवैव तानि॥

अहो! यहाँ आश्चर्य जगत में, विष हरने मणि खोज रहे।
मंत्र रसायन दवा खोजने, यहाँ-वहाँ सिर फोड़ रहे॥
किन्तु आप ही मन्त्र रसायन, औषध हो यह ध्यान नहीं।
ये सब हैं प्रभु नाम आपके, जिनवर सम भगवान नहीं॥

ॐ ह्रीं विषापहार विषापहार-स्तोत्र-आराध्य श्रीजिनेन्द्राय अर्घ्यं...।

१५. समदृष्टि वीतरागी

चित्ते न किञ्चित्कृतवानसि त्वं देवः कृतश्चेतसि येन सर्वम्।
हस्ते कृतं तेन जगद्विचित्रं सुखेन जीवत्यपि चित्तबाह्यः॥

नाथ! आप कुछ भी नहिं करते, किन्तु रहो जिसके मन में।
वही भक्त इस विदित विश्व को, कर लेता अपने वश में॥
बहुत बड़ा आश्चर्य यही है, चित्त रहित जिननाथ रहे।
किन्तु सदा सुख से जीते हैं, जिनपद में मम माथ रहें॥

ॐ ह्रीं समदृष्टिवीतरागी विषापहार-स्तोत्र-आराध्य श्रीजिनेन्द्राय अर्घ्यं...।

१६. त्रिकालज्ञ

त्रिकालतत्त्वं त्वमवैस्त्रिलोकी स्वामीति संख्यानियतेरमीषाम्।
बोधाधिपत्यं प्रतिनाभविष्यत् तेऽन्येऽपि चेद्व्याप्स्यदमूनपीदम्॥

तीन-काल के तत्त्व जानते, तीन-लोक के हो स्वामी।
यह संख्या तो तुल्य रही पर, अतुल रहे केवलज्ञानी॥
और तत्त्व यदि होते उनको, व्याप्त करें अन्तर्यामी।
तुम्हें नमामि केवलज्ञानी, हम भी हों शिवपुर-धामी॥

ॐ ह्रीं त्रिकालज्ञ विषापहार-स्तोत्र-आराध्य श्रीजिनेन्द्राय अर्घ्यं...।

१७. शुभकारी सेवा

नाकस्य पत्युः परिकर्म रम्यं नागम्यरूपस्य तवोपकारि।
तस्यैव हेतुः स्वसुखस्य भानोरुद्बिभ्रतश्छत्रमिवादरेण ॥

इन्द्र करें जो जिन-अर्चा वो, अगम्य अद्भुत मनहारी।
उससे क्या उपकार आपका, किन्तु इन्द्र की उपकारी॥
ज्यों सूरज को छत्र लगे तो, उससे उसको क्या मिलता।
पर जो सादर छत्र लगाता, वो आतम सुख पा खिलता॥

ॐ ह्रीं शुभकारी-सेवाप्रदाता विषापहार-स्तोत्र-आराध्य श्रीजिनेन्द्राय अर्घ्यं...।

१८. अगम्य स्वरूप

क्वोपेक्षकस्त्वं क्व सुखोपदेशः स चेत्किमिच्छाप्रतिकूलवादः।
क्वासौ क्व वा सर्वजगत्प्रियत्वं तन्नो यथातथ्यमवेविचं ते॥

राग-द्वेष बिन आप कहाँ प्रभु, अरु सुख का उपदेश कहाँ।
यदि सुख का उपदेश दिया तो, इच्छा के विपरीत यहाँ॥
कहाँ रहा विपरीत कथन अरु, जीवों का कल्याण कहाँ।
सत्य कथन मैं क्या कह पाऊँ, अतः झुकाऊँ शीश यहाँ॥

ॐ ह्रीं अगम्यस्वरूप विषापहार-स्तोत्र-आराध्य श्रीजिनेन्द्राय अर्घ्यं...।

१९. उन्नत गुण वाले

तुङ्गात्फलं यत्तदकिञ्चनाच्च प्राप्यं समृद्धान्न धनेश्वरादेः।
निरम्भसोऽप्युच्चतमादिवाद्रेर्नैकापि निर्याति धुनी पयोधेः॥

तन धन से जो गरीब हों पर, विशाल मन वाले होते।
उनका दान देखकर जग में, धनी चीस निजयश खोते॥
ठीक कहा जल शून्यगिरि से, कभी सजल नदी न निकले।
अतः उदारमना बनने को, शक्ति हमारी भी मचले॥

ॐ ह्रीं उन्नतगुणी विषापहार-स्तोत्र-आराध्य श्रीजिनेन्द्राय अर्घ्यं...।

२०. पुण्यातिशय का प्रभाव

त्रैलोक्यसेवानियमाय दण्डं दध्रे यदिन्द्रो विनयेन तस्य।
तत्प्रातिहार्यं भवतः कुतस्त्यं तत्कर्मयोगाद्यदि वा तवास्तु॥

तीन-लोक की सेवा करने, दण्ड इन्द्र ने धार लिया।
इसीलिए तो प्रातिहार्य यह, उसका ही स्वीकार किया॥
हुआ कहाँ से यही आपका, प्रेरक बन उपकार किया।
अतः आपके प्रातिहार्य को, नमन किया स्वीकार किया॥

ॐ ह्रीं पुण्यातिशयी विषापहार-स्तोत्र-आराध्य श्रीजिनेन्द्राय अर्घ्यं...।

२१. समदृष्टा

श्रिया परं पश्यति साधु निःस्वः श्रीमान्न कश्चित्कृपणं त्वदन्यः।
यथा प्रकाशस्थितमन्धकारस्थायीक्षतेऽसौ न तथा तमःस्थम्॥

निर्धन जन जड़धन से ज्यादा, मुनिजन का सम्मान करें।
धर्म रहित कंजूस धनी तो, मुनिजन का अपमान करें॥
खड़े उजाले में जन को तो, अँधयारे जन देख सकें।
किन्तु अँधेरे में थित जन को, उजयारे जन लख न सकें॥

ॐ ह्रीं समदृष्टा विषापहार-स्तोत्र-आराध्य श्रीजिनेन्द्राय अर्घ्यं...।

२२. इन्द्रिय अगोचर

स्ववृद्धिनिःश्वासनिमेषभाजि प्रत्यक्षमात्मानुभवेऽपि मूढः।
किं चाखिलज्ञेयविवर्तिबोध-स्वरूपमध्यक्षमवैति लोकः॥

देह वृद्धि हो पलक झपकना, प्राण श्वास को पाकर भी।
अपना अनुभव कर न सके जो, मूर्ख वही गुण गाकर भी॥
मूरख ऐसे जाने कैसे, नाथ! आपको गुणरूपी।
आप विश्व के ज्ञाता-दृष्टा, आत्म-स्वरूपी सुखरूपी॥

ॐ ह्रीं इन्द्रियागोचर विषापहार-स्तोत्र-आराध्य श्रीजिनेन्द्राय अर्घ्यं...।

२३. स्वरूप अनभिज्ञ अज्ञानी

तस्यात्मजस्तस्य पितेति देव! त्वां येऽवगायन्ति कुलं प्रकाश्य।
तेऽद्यापि नन्वाश्मनमित्यवश्यं पाणौ कृतं हेम पुनस्त्यजन्ति॥

आप रहे हो पुत्र अमुक के, अथवा पिता अमुक के हो।
वंश-कथा से विनय न होती, तुम तो पिता जगत के हो॥

मिले स्वर्ग को छोड़ रहे हो, सोने को पत्थर कह के।
कुन्दन से हम चमकें तुमको, पारसमणि जिनवर कह के॥

ॐ ह्रीं स्वरूपज्ञानी विषापहार-स्तोत्र-आराध्य श्रीजिनेन्द्राय अर्घ्यं...।

२४. मोहविजयी भगवन्

दत्तस्त्रिलोक्यां पटहोभिभूताः सुरासुरास्तस्य महान् स लाभः।
मोहस्य मोहस्त्वयि को विरोद्धुम् मूलस्य नाशो बलवद्विरोधः॥

तीन-लोक को जीत मोह ने, बजा दिया जग का तबला।
सुरासुरों ने सिर टेका तो, हुआ मोह का खूब भला॥
पर जिनवर का विरोध करने, शक्ति न पाए मोहबली।
बलवानों का विरोध करके, बचे न कोई मूलखली॥

ॐ ह्रीं मोहविजयी विषापहार-स्तोत्र-आराध्य श्रीजिनेन्द्राय अर्घ्यं...।

२५. अभिमान रहित भगवन्

मार्गस्त्वयैको ददृशे विमुक्तेः चतुर्गतीनां गहनं परेण।
सर्वं मया दृष्टमिति स्मयेन त्वं मा कदाचित् भुजमालुलोकः॥

नाथ! आपने एक अकेला, मोक्षमार्ग ही देखा है।
किन्तु चार गतियों का भव-वन, अन्य जनों ने देखा है॥
तभी आप में सब कुछ देखा, ऐसा जब अभिमान हुआ।
अन्यों को फिर कभी न देखा, तुम्हें पूज मैं धन्य हुआ॥

ॐ ह्रीं निरभिमान विषापहार-स्तोत्र-आराध्य श्रीजिनेन्द्राय अर्घ्यं...।

२६. विरोधी रहित अविनाशी

स्वर्भानुरर्कस्य हविर्भुजोऽम्भः कल्पान्तवातोऽम्बुनिधेर्विघातः।
संसारभोगस्य वियोगभावो विपक्षपूर्वाभ्युदयास्त्वदन्ये॥

राहु सूर्य का नीर अग्नि का, प्रलय सिन्धु का नाश करे।
विरह भाव संसार सुखों का, पूरा सत्यानाश करे॥
नाथ! आपसे भिन्न वस्तु का, उदय नाश को ही होता।
किन्तु आपको भक्त नमन कर, बीज अमरता का बोता॥

ॐ ह्रीं अविनाशी विषापहार-स्तोत्र-आराध्य श्रीजिनेन्द्राय अर्घ्यं...।

२७. आपको नमस्कार निष्फल नहीं

अजानतस्त्वां नमतः फलं यत् तज्जानतोऽन्यं न तु देवतेति।
हरिन्मणिं काचधिया दधानः तं तस्य बुद्ध्या वहतो न रिक्तः॥

जिनवर प्रभु को बिन जाने ही, नमस्कार का फल ऐसा।
पर देवों के भक्त जनों को, मिल न सके वह फल वैसा॥
क्योंकि काँच जो हीरा कहकर, धारे उस सा रंक नहीं।
अतः जगत में 'जय जिनेन्द' सा, दूजा कोई शंख नहीं॥

ॐ ह्रीं नमस्काररूप विषापहार-स्तोत्र-आराध्य श्रीजिनेन्द्राय अर्घ्यं...।

२८. अज्ञानियों की मान्यता

प्रशस्तवाचश्चतुराः कषायैः दग्धस्य देवव्यवहारमाहुः।
गतस्य दीपस्य हि नन्दितत्वं दृष्टं कपालस्य च मङ्गलत्वम् ॥

मधुर बोलने वाले जग में, चतुर पुरुष बन कर रहते।
जो कषाय से जले जनों को, 'देव' बोलने को कहते॥
क्योंकि फूटा कलशा एवं, बुझा दीप मंगलमय हो।
आदि ब्रह्म की जय बोलो तो, पाप कषायों का क्षय हो॥

ॐ ह्रीं अज्ञानहर्त्ता विषापहार-स्तोत्र-आराध्य श्रीजिनेन्द्राय अर्घ्यं...।

२९. हितकारी निर्दोष उपदेशक

नानार्थमेकार्थमदस्त्वदुक्तं हितं वचस्ते निशम्य वक्तुः।
निर्दोषतां के न विभावयन्ति ज्वरेण मुक्तः सुगमः स्वरेण ॥

बहुत अर्थ में एक प्रयोजन, वक्ता बन जिनदेव कहें।
हितकारी जिनवाणी को सुन, सभी इन्हें निर्दोष कहें॥
सच ही है ज्वर मुक्त हुआ जो, स्वर उसकी पहचान बनें।
हमें सुनाओ जिनवाणी प्रभु, हम सब भी भगवान बनें॥

ॐ ह्रीं हितकारी-उपदेशक विषापहार-स्तोत्र-आराध्य श्रीजिनेन्द्राय अर्घ्यं...।

३०. स्वभाव से उपकारी

न क्वापि वाञ्छा वकृते च वाक्ते काले क्वचित्कोऽपि तथा नियोगः।
न पूरयाम्यम्बुधिमित्युदंशुः स्वयं हि शीतद्युतिरभ्युदेति ॥

नाथ। आपकी किसी वस्तु में, कोई इच्छा रही नहीं।
फिर भी जब बोलो तो हित-मित, अद्भुत है संयोग यही॥
सागर भरने चाँद न उगता, किन्तु स्वयं ही उदित हुआ।
ऐसे ही हो दिव्य देशना, भव्य पुण्य तब निमित हुआ॥

ॐ ह्रीं स्वभावोपकारी विषापहार-स्तोत्र-आराध्य श्रीजिनेन्द्राय अर्घ्यं...।

३१. अनन्त गुणधारी

गुणा गभीराः परमाः प्रसन्ना बहुप्रकारा बहवस्तवेति।
दृष्टोऽयमन्तः स्तवनेन तेषां गुणो गुणानां किमतः परोऽस्ति ॥

ईश! आपके बहुत तरह के, उज्ज्वल गुण गंभीर रहे।
परम श्रेष्ठ उत्कृष्ट अनन्तों, उन्हें कौन अतिवीर कहे॥
उनको तीर दिखें थुति करके, गुण गाए बिन पंथ कहा।
उसी पंथ को पाने स्वामी, हम पूजें निर्ग्रन्थ यहाँ॥

ॐ ह्रीं अनन्तगुणधारी विषापहार-स्तोत्र-आराध्य श्रीजिनेन्द्राय अर्घ्यं...।

३२. सर्वसिद्धि प्रदायी उपासना

स्तुत्या परं नाभिमतं हि भक्त्या स्मृत्या प्रणत्या च ततो भजामि।
स्मरामि देवं प्रणमामि नित्यं केनाप्युपायेन फलं हि साध्यम्॥

केवल थुति इच्छित वर देती, इसकी सिद्धि नहीं होती।
किन्तु शक्ति या प्रभु सुमरन से, और नमन से भी होती॥
अतः सदा मैं देव! आपका, भजन नमन सुमरन कर लूँ।
क्योंकि मनोरथ पूरा करने, येन केन कुछ भी वर लूँ॥

ॐ ह्रीं सर्वसिद्धिप्रदायी विषापहार-स्तोत्र-आराध्य श्रीजिनेन्द्राय अर्घ्यं...।

३३. पुण्य के प्रधान कारण

ततस्त्रिलोकीनगराधिदेवं नित्यं परं ज्योतिरनन्तशक्तिम्।
अपुण्यपापं परपुण्यहेतुं नमाम्यहं वन्द्यमवन्दितारम्॥

अतः त्रिलोकीनाथ नित्य हो, धारी नन्त वीर्य धन के।
पाप-पुण्य से रहित किन्तु हो, हमें हेतु पुण्यार्जन के॥
वंदनीय सब जगसे लेकिन, करो किसी को ना वन्दन।
परमज्योति हो अतः करें हम, नमन वन्दना अभिनन्दन॥

ॐ ह्रीं पुण्यकारक विषापहार-स्तोत्र-आराध्य श्रीजिनेन्द्राय अर्घ्यं...।

३४. सदा स्मरणीय

अशब्दमस्पर्शमरूपगन्धं त्वां नीरसं तद्विषयावबोधम्।
सर्वस्य मातारममेयमन्यैर् जिनेन्द्रमस्मार्यमनुस्मरामि॥

शब्द, गंध, संस्पर्श रूप रस, इन जड़ से तो रहित रहे।
लेकिन इन्हें जानने वाले, आत्मज्ञान से सहित रहे॥

ऐसे प्रभु का सुमरन करना, और जानना दुर्गम है।
फिर भी ऐसे प्रभु ध्याऊँ जो, चिदानंद परमातम हैं॥

ॐ ह्रीं सदास्मरणीय विषापहार-स्तोत्र-आराध्य श्रीजिनेन्द्राय अर्घ्यं...।

३५. सत्य शरण रूप

अगाधमन्यैर्मनसाप्यलंघ्यं निष्किञ्चनं प्रार्थितमर्थवद्भिः।
विश्वस्य पारं तमदृष्टपारं पतिं जिनानां शरणं व्रजामि ॥

अपराजित हो अगाध भी हो, पर मन तुमको क्या लांघे।
जड़धन से निर्धन हो कर भी, धनिक आपसे सुख माँगें॥
गए विश्व के पार परन्तु, पार तुम्हारा जाने कौन।
ऐसे मृत्युंजय जिनवर की, शरणागत में होता मौन॥

ॐ ह्रीं सत्यशरणरूप विषापहार-स्तोत्र-आराध्य श्रीजिनेन्द्राय अर्घ्यं...।

३६. स्वाभाविक गुणों से उन्नत

त्रैलोक्यदीक्षा गुरवे नमस्ते यो वर्धमानोऽपि निजोन्नतोऽभूत्।
प्राग्गण्डशैलः पुनरद्रिकल्पः पश्चान्नमेरुः कुलपर्वतोऽभूत्॥

वर्धमान क्रमशः होकर भी, खुद ही खुद से उन्नत हो।
त्रिभुवन के तुम दीक्षागुरु हो, नमन आपको नत-नत हो॥
जैसे मेरू पहले पत्थर, फिर गिरि कुल पर्वत न हुआ।
है स्वभाव से वो तो जैसे, वैसे ही जिनरूप हुआ॥

ॐ ह्रीं स्वाभाविकगुणोन्नत विषापहार-स्तोत्र-आराध्य श्रीजिनेन्द्राय अर्घ्यं...।

३७. काल विजयी

स्वयं प्रकाशस्य दिवा निशा वा न बाध्यता यस्य न बाधकत्वम्।
न लाघवं गौरवमेकरूपं वन्दे विभुं कालकलामतीतम्॥

स्वयं प्रकाशी ज्योतिपुंज हो, भेद नहीं दिन रातों का।
ऐसा बाधक-बाध्यपना भी, मिले न जिनकी बातों का॥
लाघव-गौरव कला रहित हो, एक रूप परमेश्वर हो।
अतः आपको नमस्कार हो, आप सुखद सर्वेश्वर हो॥

ॐ ह्रीं कालविजयी विषापहार-स्तोत्र-आराध्य श्रीजिनेन्द्राय अर्घ्यं...।

३८. अयाचित फल प्रदाता

इति स्तुतिं देव! विधाय दैन्याद् वरं न याचे त्वमुपेक्षकोऽसि।
छायातरुं संश्रयतः स्वतः स्यात् कश्छायया याचितयात्मलाभः॥

इस विध थुति कर दीनभाव से, माँगू ना वरदान प्रभो।
आप उपेक्षक वीतराग हो, अतः करूँ गुणगान विभो॥
गए पुरुष जो वृक्ष-शरण में, वे खुद ही छाया पाते।
लाभ याचना से उनको क्या, शरणार्थी सब कुछ पाते॥

ॐ ह्रीं अयाचित फलप्रदाता विषापहार-स्तोत्र-आराध्य श्रीजिनेन्द्राय अर्घ्यं...।

३९. सद्बुद्धि प्रदाता श्रेष्ठ गुरु

अथास्ति दित्सा यदि वोपरोधस्त्वय्येव सक्तां दिश भक्तिबुद्धिम्।
करिष्यते देव तथा कृपां मे कोवात्मपोष्ये सुमुखो न सूरिः॥

यदि कुछ देने की इच्छा या, माँगो ऐसा आशय हो।
तो तुम में ही लीन रहूँ मैं, भक्ति बुद्धि ऐसा वर दो॥
कृपा आपकी मुझ पर होगी, क्योंकि आपका मैं बंदा।
ज्यों अनुकूल शिष्य पर गुरुवर, कृपा करें तो हो चंगा॥

ॐ ह्रीं सद्बुद्धिप्रदाता विषापहार-स्तोत्र-आराध्य श्रीजिनेन्द्राय अर्घ्यं...।

(पुष्पिताग्रा छन्द)

४०. भक्ति का वैशिष्ट्य

वितरति विहिता यथाकथञ्चिज्जिन विनताय मनीषितानि भक्तिः।
त्वयि नुतिविषया पुनर्विशेषाद्दिशति सुखानि यशो धनं जयं च॥

नम्र पुरुष जो इस विध उस विध, जैसी कैसी भक्ति करे।
वही भक्ति उस भक्त पुरुष को, इच्छित वर दे गोद भरे॥
फिर तो विशेष थुति नुति कर जो, 'आदीश्वर' को याद करे।
वह खुद धनसुख यश-जय पा ले, 'सुव्रत' को भी स्वस्थ करे॥

ॐ ह्रीं भक्तिकारक विषापहार-स्तोत्र-आराध्य श्रीजिनेन्द्राय अर्घ्यं...।

जाप्य मंत्र—ॐ ह्रीं श्रीं क्लीं अर्हं श्रीसर्वजिनेन्द्राय नमो नमः।

जयमाला

(ज्ञानोदय)

जिनको रोगों ने घेरा हो, जिन्हें औषधि मिले नहीं।
स्वस्थ मस्त होने की आशा, जिनको जग में दिखे नहीं॥
रोगों में धन नष्ट हो चुका, कमर झुकी हो पीड़ा से।
वे ना भटकें नहीं दुखी हों, पथ पाएँ जिन हीरा से॥१॥
यथा धनंजय महाकवि ने, जिनवर पर श्रद्धा करके।
भक्ति-भाव से जिन-महिमा को, दर्शाया पूजा करके॥

जिसकी जैसी श्रद्धा होती, वैसा ही वो फल पाते।
अतः धनञ्जय भी बेटे को, विष से मुक्त करा लाते॥२॥
हुआ शोर चहुँ ओर इसी से, जिनशासन जयवंत हुआ।
और करें क्या अधिक प्रशंसा, सर्वमान्य जिनमंत्र हुआ॥
औषध मंत्र रसायन माया, सब जिनवर के नाम रहे।
अतः न भटको यहाँ-वहाँ तुम, सुखदायक श्रद्धान रहे॥३॥
आज हमारी डगमग श्रद्धा, जिनवर प्रभु पर अडिग रहे।
इसी भावना से हम पूजें, भक्ति नहीं संदिग्ध रहे॥
व्यसन पाप अन्याय अनीति, इन सबका जग त्याग करे।
'विद्या' के 'सुव्रत' यह चाहें, जिन से जग अनुराग करे॥४॥

(सोरठा)

विषापहार स्त्रोत, भव-विष हर्त्ता यंत्र है।
भजे धनञ्जय स्तोत्र, श्री जिनवर का मंत्र है॥

ॐ ह्रीं श्रीं क्लीं अर्हं विषापहार-स्तोत्र-आराध्य श्रीजिनेन्द्राय अनर्घपदप्राप्तये जयमाला पूर्णार्घ्यं...।

(दोहा)

विषापहार स्तोत्र करे, विश्वशान्ति कल्याण।
प्रासुक जल की धार दे, हम पूजत भगवान॥

(शान्तये शान्तिधारा)

कल्पवृक्ष के पुष्प सम, पुष्पांजलि पद लाए।
भव दुःखों को मेंट दो, विषापहार जिनराय॥

(पुष्पांजलिं....)

प्रशस्ति

(दोहा)

यह है विषापहार का, भक्ति सहित गुणगान।
पढ़ो सुनो तो स्वथ्य हों, होए शीघ्र कल्याण॥
सिद्धांत व संजीव की, सुनी नम्र फरियाद।
'सुव्रत' अशोकनगर में, लिखे पद्यानुवाद॥
शुरु धन्य तेरस हुआ, पूर्ण दिवाली शाम।
रोग कष्ट संकट नशें, मिलें राम आराम॥

===

श्री भूपाल जिनचतुर्विंशतिका विधान

काशी नगरी में हेमवान नाम के प्रसिद्ध जैनधर्मानुयायी उदारचरित राजा के पुत्र भूपाल थे। लेकिन ज्ञान बिल्कुल भी नहीं था। हर जगह तिरस्कार ही मिलता था। अपनी अशिक्षित दशा से खेदखिन्न हो भूपाल अपने छोटे भाई से ज्ञानवृद्धि का उपाय पूछते हैं। लघु भ्राता भुजपाल कहते हैं– भैया! भक्तामर स्तोत्र का ६वाँ काव्य ऋद्धि-मंत्र सहित सीखकर आराधना कीजिए। भूपाल ने गंगा नदी के किनारे विधिपूर्वक मन्त्र की आराधना की। मन्त्र जाप्य के प्रभाव से ब्राह्मी देवी ने प्रकट होकर भूपाल को विद्या का इस तरह वरदान दिया कि वे संस्कृत, व्याकरण, न्याय-अलंकार आदि के धुरन्धर विद्वान् हो गए। काशी नगर में उनकी बराबरी करने वाला कोई विद्वान् नहीं था। वे महाकवि के रूप में प्रसिद्ध हुए। 'भूपाल जिनचतुर्विंशतिका' स्तोत्र की रचना कर आपने जिनदर्शन की महिमा का अपूर्व फल जनमानस के स्मृति-पटल पर अंकित करने का महाप्रयास किया है। इसमें २६ श्लोक की भक्ति प्रधान मालिका है।

स्थापना (दोहा)

कर नमोऽस्तु जिनदेव को, चौबीसी भूपाल।
करें अर्चना आज हम, सदा झुकाएँ भाल॥

(ज्ञानोदय)

राजपुत्र भूपाल बड़े ही, अज्ञानी नादान हुए।
पर जिनवर की सेवा करके, महाकवि विद्वान हुए॥
सो हम भी जिनपूजा करके, खेद-खिन्न अज्ञान हरें।
मनमन्दिर में उच्चासन दे, जिनवर का आह्वान करें॥

ॐ ह्रीं श्रीं क्लीं अर्हं श्री भूपालजिनचतुर्विंशतिका-स्तोत्र-आराध्य श्रीजिनेन्द्र अत्र अवतर-अवतर...। अत्र तिष्ठ-तिष्ठ ठः ठः...। अत्र मम सन्निहितो भव-भव वषट्...।
(पुष्पांजलिं...)

(हकलिका)

जन्म मृत्यु दुख की धारा, रुक जाती जिनवर द्वारा।
सो पूजे भूपाल जिनम्, जल से हम करते अर्चन॥

ॐ ह्रीं श्रीं क्लीं अर्हं श्री भूपालजिनचतुर्विंशतिका-स्तोत्र-आराध्य श्रीजिनेन्द्राय जन्म-जरा-मृत्युविनाशनाय जलं...।

राग-द्वेष संताप हरें, जिनवर कायाकल्प करें।
सो पूजे भूपाल जिनम्, चंदन से करते अर्चन॥

ॐ ह्रीं श्रीं क्लीं अर्हं श्री भूपालजिनचतुर्विंशतिका-स्तोत्र-आराध्य श्रीजिनेन्द्राय संसारताप-विनाशनाय चंदनम्...।

भवभ्रमणा का नाश करें, जिनवर सुख संन्यास धरें।
सो पूजे भूपाल जिनम्, अक्षत से करते अर्चन॥

ॐ ह्रीं श्रीं क्लीं अर्हं श्री भूपालजिनचतुर्विंशतिका-स्तोत्र-आराध्य श्रीजिनेन्द्राय अक्षयपद-प्राप्तये अक्षतान्...।

ॐ ह्रीं श्रीं क्लीं अर्हं श्री भूपालजिनचतुर्विंशतिका-स्तोत्र-आराध्य श्रीजिनेन्द्राय कामबाण-विध्वंसनाय पुष्पाणि...।

किया काम का काम तमाम, जिनवर पाए आतमराम।
सो पूजे भूपाल जिनम्, ले नैवेद्य करें अर्चन॥

ॐ ह्रीं श्रीं क्लीं अर्हं श्री भूपालजिनचतुर्विंशतिका-स्तोत्र-आराध्य श्रीजिनेन्द्राय क्षुधारोग-विनाशनाय नैवेद्यं...।

मोह-अन्ध के नाशक हैं, आतम-ज्ञान प्रकाशक हैं।
सो पूजे भूपाल जिनम्, दीपक से करते अर्चन॥

ॐ ह्रीं श्रीं क्लीं अर्हं श्री भूपालजिनचतुर्विंशतिका-स्तोत्र-आराध्य श्रीजिनेन्द्राय मोहान्धकार-विनाशनाय दीपं...।

कर्म कालिमा प्रभु हरते, आतम को निर्मल करते।
सो पूजे भूपाल जिनम्, धूप चढ़ा करते अर्चन॥

ॐ ह्रीं श्रीं क्लीं अर्हं श्री भूपालजिनचतुर्विंशतिका-स्तोत्र-आराध्य श्रीजिनेन्द्राय अष्टकर्म-दहनाय धूपं...।

सांसारिक फल प्रभु तजते, महामोक्ष फल से सजते।
सो पूजे भूपाल जिनम्, फल से हम करते अर्चन॥

ॐ ह्रीं श्रीं क्लीं अर्हं श्री भूपालजिनचतुर्विंशतिका-स्तोत्र-आराध्य श्रीजिनेन्द्राय मोक्षफल-प्राप्तये फलं...।

आतम को अनमोल किए, प्रभु हर बन्धन खोल दिए।
सो पूजे भूपाल जिनम्, अर्घ्य चढ़ा करते अर्चन॥

ॐ ह्रीं श्रीं क्लीं अर्हं श्री भूपालजिनचतुर्विंशतिका-स्तोत्र-आराध्य श्रीजिनेन्द्राय अनर्घपद-प्राप्तये अर्घ्यं...।

अर्घ्यावली

१. जिनदर्शन महिमा

(शार्दूलविक्रीडित)

श्रीलीलायतनं महीकुलगृहं कीर्तिप्रमोदास्पदं,
वाग्देवीरतिकेतनं जयरमाक्रीडानिधानं महत्।
सः स्यात्सर्वमहोत्सवैकभवनं यः प्रार्थितार्थप्रदं,
प्रातः पश्यति कल्पपादपदलच्छायं जिनाङ्घ्रिद्वयम् ॥

(विष्णु)

जो जन प्रातः कल्पवृक्ष सम, जिनदर्शन करता।
लक्ष्मी सरस्वती जयश्री का, वो मंदिर बनता॥
भूकुल-भवन हर्ष यश का वो, बनता है आलय।
सभी महापर्वों का घर वह, बनके पाए जय॥

ॐ ह्रीं सम्यक्त्व-वर्धक भूपालजिनचतुर्विंशतिका-स्तोत्र-आराध्य श्रीजिनेन्द्राय अर्घ्यं...।

२. शरणप्रदाता

(वसंततिलका)

शान्तं वपुः श्रवणहारि वचश्चरित्रं,
सर्वोपकारि तव देव! ततः श्रुतज्ञाः।
संसारमारवमहास्थलरुन्दसान्द्र -
च्छायामहीरुह! भवन्तमुपाश्रयन्ते॥

देव! आपकी देह शान्त है, वचन कर्ण-प्रिय हैं।
उपकारी चारित्र रहा सो, आप जगत-प्रिय है॥
जगत मरुस्थल में प्रभु विस्तृत, छाया वृक्ष सघन।
सो श्रुतज्ञाता सदा चाहते, प्रभु का संरक्षण॥

ॐ ह्रीं शरणप्रदाता भूपालजिनचतुर्विंशतिका-स्तोत्र-आराध्य श्रीजिनेन्द्राय अर्घ्यं...।

३. जिनदर्शन-प्रभाव

(शार्दूलविक्रीडित)

स्वामिन्नद्य विनिर्गतोऽस्मि जननीगर्भान्धकूपोदरा-
दद्योद्घाटितदृष्टिरस्मि फलवज्जन्मास्मि चाद्य स्फुटम्।
त्वामद्राक्षमहं यदक्षयपदानन्दाय लोकत्रयी-
नेत्रेन्दीवरकाननेन्दुममृतस्यन्दिप्रभाचन्द्रिकम् ॥

त्रिभुवजन के नेत्रकुमुदवन, करने को विकसन।
चन्द्रकान्ति सम अविनाशी पद, प्रभु का कर दर्शन॥
माँ के अन्धे गर्भकूप से, निकला हूँ मैं आज।
मिली दृष्टि सो जन्म सफल कर, भजूँ आपको नाथ॥

ॐ ह्रीं प्रभाव-वर्धक भूपालजिनचतुर्विंशतिका-स्तोत्र-आराध्य श्रीजिनेन्द्राय अर्घ्यं...।

४. लोकोत्तर-साध्य

निःशेषत्रिदशेन्द्रशेखर शिखा रत्नप्रदीपावली-
सान्द्रीभूतमृगेन्द्रविष्टरतटी माणिक्यदीपावलिः।
क्वेयंश्रीः क्व च निःस्पृहत्वमिदमित्यूहातिगस्त्वादृशः
सर्वज्ञानदृशश्चरित्रमहिमा लोकेश! लोकोत्तरः॥

मुकुट इन्द्र की रत्न-पंक्तियाँ, मणिमय दीवाली।
यही लक्ष्मी कहाँ और वह, निस्पृहता वाली॥
हे लोकेश! आप लोकोत्तर, कौन आप सम हैं।
तर्क रहित चारित्रवान् जो, पूज्य चिदातम हैं॥

ॐ ह्रीं लोकोत्तरसाध्य भूपालजिनचतुर्विंशतिका-स्तोत्र-आराध्य श्रीजिनेन्द्राय अर्घ्यं...।

५. जिनवैभव

राज्यं शासनकारिनाकपति यत्त्यक्तं तृणावज्ञया,
हेलानिर्दलितत्रिलोकमहिमा यन्मोहमल्लो जितः।
लोकालोकमपि स्वबोधमुकुर स्यान्तः कृतं यत्त्वया।
सैषाश्चर्यपरम्परा जिनवर क्वान्यत्र सम्भाव्यते ॥

इन्द्र राज्य भी नाथ आपने, तृणवत् त्याग दिया।
त्रिभुवन विजयी मोहमल्ल भी, तुमने जीत लिया॥
लोकालोक दिखे दर्पणसम, वो आश्चर्य महान।
परम्परा वह आप बिना ना, दिखे अन्य भगवान॥

ॐ ह्रीं वैभवप्रदाता भूपालजिनचतुर्विंशतिका-स्तोत्र-आराध्य श्रीजिनेन्द्राय अर्घ्यं...।

६. सम्पत्तिदायक-दर्शन

दानं ज्ञानधनाय दत्तमसकृत्पात्राय सद्वृत्तये,
चीर्णान्युग्रतपान्सि तेन सुचिरं पूजाश्च बह्व्यः कृताः।

शीलानां निचयः सहामलगुणैः सर्वः समासादितो
दृष्टस्त्वं जिन येन दृष्टिसुभगः श्रद्धापरेण क्षणम् ॥

नयनप्रिय प्रभु क्षणिक तुम्हें जो, देखें श्रद्धालु।
दान ज्ञान-धन उसको मिलता, जो है धर्मालु॥
उसे उग्रतप वा चिरकाली, पूजाओं का फल।
शीलव्रतों का समूह मिलता, मिलते गुण निर्मल॥

ॐ ह्रीं सम्पत्तिप्रदाता भूपालजिनचतुर्विंशतिका-स्तोत्र-आराध्य श्रीजिनेन्द्राय अर्घ्यं...।

७. जिनभूषण

प्रज्ञापारमितः स एव भगवान्पारं स एव श्रुत-,
स्कन्धाब्धेर्गुणरत्नभूषण इति श्लाघ्यः स एव ध्रुवं।
नीयन्ते जिन येन कर्णहृदयालङ्कारतां त्वद्गुणाः,
संसाराहिविषापहारमणयस्त्रैलोक्यचूडामणेः ॥

जग चूढ़ामणि प्रभु मणि ऐसे, जो भव विष हर ले।
बुद्धिमान वो हो जो तव गुण, कर्ण हृदय धर ले॥
गुण रत्नाभूषण वो पाए, श्रुतसागर का तीर।
प्रशंसनीय भगवान बने वो, जय हो श्री अतिवीर॥

ॐ ह्रीं भूषणप्रदाता भूपालजिनचतुर्विंशतिका-स्तोत्र-आराध्य श्रीजिनेन्द्राय अर्घ्यं...।

८. जयवन्त-जिनेन्द्र

(मालिनी)

जयति दिविजवृन्दान्दोलितैरिन्दुरोचि-
र्निचयरुचिभिरुच्चैश्चामरैर्वीज्यमानः ।
जिनपतिरनुरज्यन्मुक्तिसाम्राज्यलक्ष्मी -
युवतिनवकटाक्षक्षेपलीलां दधानैः॥

सुरगण संचालित जो उज्ज्वल, चंदा किरण समान।
मोक्षलक्ष्मी तरुण नार के, जो हैं नयन समान॥
ऐसे उन्नत चँवरों द्वारा, जो पाए सम्मान।
वे जिनेन्द्र जयवंत रहें नित, हम सबके भगवान॥

ॐ ह्रीं जयप्रदाता भूपालजिनचतुर्विंशतिका-स्तोत्र-आराध्य श्रीजिनेन्द्राय अर्घ्यं...।

९. जिनेन्द्र-अतिशय

(स्रग्धरा)

देवः श्वेतातपत्रत्रयचमरिरुहाशोकभाश्चक्रभाषा-
पुष्पौघासारसिंहासनसुरपटहैरष्टभिः प्रातिहार्यैः।
साश्चर्यैर्भ्राजमानः सुरमनुजसभाम्भोजिनी भानुमाली
पायान्नःपादपीठीकृतसकलजगत्पालमौलिर्जिनेन्द्रः॥

छत्र चँवर तरु भामण्डल ध्वनि, दुंदुभि आसन पुष्प।
आठ प्रातिहार्यों की शोभा, जो अतिशय से युक्त॥
सुर नर सभा विकाशक सूरज, पाद पीठ जिनकी।
राजमुकुट हैं करें सुरक्षा, वे जिन! हम सबकी॥

ॐ ह्रीं अतिशययुक्त भूपालजिनचतुर्विंशतिका-स्तोत्र-आराध्य श्रीजिनेन्द्राय अर्घ्यं...।

१०. सद्गति-प्रदाता

नृत्यत्स्वर्दन्तिदन्ताम्बुरुहवननटन्नाकनारीनिकायः,
सद्यस्त्रैलोक्ययात्रोत्सवकरनिनदातोद्यमाद्यन्निलिम्पः।
हस्ताम्भोजातलीलाविनिहितसुमनोदामरम्यामरस्त्री-
काम्यः कल्याणपूजा विधिषु विजयते देव देवागमस्ते॥

कल्याणक पूजा में गज के, दंतकमल वन में।
नृत्य देवियों के त्रयजग में, हर्ष करें मन में॥
हस्तकमल की पुष्पमालिका, साथी देव रहें।
ऐसे प्रभु को करें नमोऽस्तु, जो जयवंत रहें॥

ॐ ह्रीं सद्गतिप्रदाता भूपालजिनचतुर्विंशतिका-स्तोत्र-आराध्य श्रीजिनेन्द्राय अर्घ्यं...।

११. नेत्ररोग-जयी

(शार्दूलविक्रीडित)

चक्षुष्मानहमेव देव भुवने, नेत्रामृतस्यन्दिनं
त्वद्वक्त्रेन्दुमतिप्रसादसुभगैस्तेजोभिरुद्भासितम्।
तेनालोकयता मयानतिचिराच्चक्षुः कृतार्थीकृतं
द्रष्टव्यावधिवीक्षणव्यतिकरव्याजृम्भमाणोत्सवम्॥

जो नयनों में सुधा झराए, शोभित तेज प्रसन्न।
सुन्दर प्रभु मुखचन्द्र देखकर, हुआ स्वयं मैं धन्य॥

दृष्ट वस्तु के दर्शक नयना, शीघ्र कृतार्थ हुए।
सो मैं ही तो नेत्रवान हूँ, ज्यों प्रभु दर्श हुए॥

ॐ ह्रीं नेत्ररोगजयी भूपालजिनचतुर्विंशतिका-स्तोत्र-आराध्य श्रीजिनेन्द्राय अर्घ्यं...।

१२. कामविजेता

(वसंततिलका)

कन्तोः सकान्तमपि मल्लमवैति कश्चि-
न्मुग्धो मुकुन्दमरविन्दजमिन्दुमौलिम्।
मोघीकृतत्रिदशयोषिदपाङ्गपात -
स्तस्य त्वमेव विजयी जिनराज! मल्लः॥

नार सहित जो देव उन्हें भी, कामदेव का मल्ल।
मूढ़ मानता है अज्ञानी, पाता केवल शल्य॥
किन्तु देवियों के कटाक्ष को, जो कर डाले व्यर्थ।
नाथ! आप ही शूरवीर हो, किए सफल परमार्थ॥

ॐ ह्रीं कामविजेता भूपालजिनचतुर्विंशतिका-स्तोत्र-आराध्य श्रीजिनेन्द्राय अर्घ्यं...।

१३. जिनचन्द्र-दर्शन

(मालिनी)

किसलयितमनल्पं त्वद्विलोकाभिलाषात्-
कुसुमितमतिसान्द्रं त्वत्समीपप्रयाणात्।
मम फलितममन्दं त्वन्मुखेन्दोरिदानीम्
नयनपथमवाप्ताद्वेव पुण्यद्रुमेण ॥

जिनदर्शन की इच्छा द्वारा, पुण्यवृक्ष प्यारा।
हुआ पल्लवित चरण-शरण पा, फूला है न्यारा॥
तथा देख मुखचन्द्र आपका, लदा फलों से है।
अतः आपको नमोऽस्तु मेरा, भक्ति भाव से है॥

ॐ ह्रीं पुण्यप्रदाता भूपालजिनचतुर्विंशतिका-स्तोत्र-आराध्य श्रीजिनेन्द्राय अर्घ्यं...।

१४. सुभिक्षकर्त्ता

त्रिभुवनवनपुष्यत्पुष्पकोदण्डदर्प -
प्रसरदवनवाम्भोमुक्तिसूक्तिप्रसूतिः ।
स जयति जिनराजव्रातजीमूतसङ्घः
शतमखशिखिनृत्यारम्भनिर्बन्धबन्धुः ॥

त्रय जग-वन में कामदेव की, बढ़ी मान ज्वाला।
उसे बुझाने नव वर्षा सम, दी प्रवचन माला॥
जिसे देखकर इन्द्र मयूरा, नचने को लाचार।
बादल-दल सम जिनसमूह की, होती जय जय कार॥

ॐ ह्रीं सुभिक्षकर्ता भूपालजिनचतुर्विंशतिका-स्तोत्र-आराध्य श्रीजिनेन्द्राय अर्घ्यं...।

१५. मुक्ति-प्रदाता

भूपालस्वर्गपालप्रमुखनरसुरश्रेणिनेत्रालिमाला -
लीलाचैत्यस्य चैत्यालयमखिलजगत्कौमुदीन्दोर्जिनस्य।
उत्तंसीभूतसेवाञ्जलिपुटनलिनीकुड्मलस्त्रिः परीत्य
श्रीपादच्छाययापस्थितभवदवथुः संश्रितोस्मीव मुक्तिम् ॥

सुर-नर इन्द्र नयन अलि खेलें, चैत्यवृक्ष पाकर।
जगत कुमुद शशि सम जिनवर की, तीन प्रदक्षिण कर॥
हस्तकमल से चरणकमल की, सेवा का शृंगार।
करके मानो मुक्त हुआ है, सारा ही संसार॥

ॐ ह्रीं मुक्तिप्रदाता भूपालजिनचतुर्विंशतिका-स्तोत्र-आराध्य श्रीजिनेन्द्राय अर्घ्यं...।

१६. श्रेष्ठगुण-प्रदाता

(वसंततिलका)

देव त्वदङ्घ्रिनखमण्डलदर्पणेस्मि-
न्नर्घ्ये निसर्गरुचिरे चिरदृष्टवक्त्रः।
श्रीकीर्तिकान्तिधृतिसङ्गमकारणानि
भव्यो न कानि लभते शुभमङ्गलानि ॥

देव पुण्य स्वभाव से सुन्दर, नखमण्डल आदर्श।
नाथ! आपका मुख दर्शन कर, होते भव्य सहर्ष॥
लक्ष्मी कान्ति यश धीरज पाकर, क्या ना करते प्राप्त।
सब कुछ पाकर भवयात्रा को, करते भक्त समाप्त॥

ॐ ह्रीं श्रेष्ठगुणप्रदाता भूपालजिनचतुर्विंशतिका-स्तोत्र-आराध्य श्रीजिनेन्द्राय अर्घ्यं...।

१७. लक्ष्मी-प्रदाता

(मालिनि छन्द)

जयति सुरनरेन्द्रश्री सुधानिर्झरिण्याः
कुलधरणिधरोयं जैनचैत्याभिरामः।

प्रविपुलफलधर्मानोकहाग्रप्रवाल -
प्रसरशिखरशुम्भत्केतनः श्रीनिकेतः॥
सुर नर इन्द्र रमामृत झरने, आप कुलाचल हो।
फल-फूलों के धर्मवृक्ष के, कलियों के दल हो॥
ऐसी ध्वजा लगी हो जिस पर, वो लक्ष्मी आलय।
वो जयवंत रहें जिनवर के, सुन्दर चैत्यालय॥

ॐ ह्रीं लक्ष्मीप्रदाता भूपालजिनचतुर्विंशतिका-स्तोत्र-आराध्य श्रीजिनेन्द्राय अर्घ्यं...।

१८. शत्रु-विजेता

विनमदमरकान्ता, कुन्तलाक्रान्तकान्ति-
स्फुरितनखमयूखद्योतिताशान्तरालः ।
दिविजमनुजराज-, व्रातपूज्यक्रमाब्जो
जयति विजितकर्मा-, रातिजालो जिनेन्द्रः॥
झुकीं देवियों के केशों से, प्रतिबिम्बित नखचन्द्र।
करें प्रकाशित सभी दिशाएँ, जिन्हें भजें नर इन्द्र॥
कर्मशत्रु के रहे विजेता, जिनके चरणकमल।
वो जिनेन्द्र जयवंत रहें नित, देवें मोक्षमहल॥

ॐ ह्रीं शत्रु-विजेता भूपालजिनचतुर्विंशतिका-स्तोत्र-आराध्य श्रीजिनेन्द्राय अर्घ्यं...।

१९. मंगलकर्त्ता

(वसंततिलका)

सुप्तोत्थितेन सुमुखेन सुमङ्गलाय,
दृष्टव्यमस्ति यदि मङ्गलमेव वस्तु।
अन्येन किं तदिह नाथ तवैव वक्त्रं,
त्रैलोक्यमङ्गलनिकेतनमीक्षणीयम् ॥
जाग्रत सुन्दरमुखी पुरुष जो, चाहे आत्म भला।
प्रातः वह मंगलमय वस्तु, देखे पर से क्या॥
नाथ! आपका मुख त्रयजग में, मंगल-भवन रहा।
सो प्रातः जिनवर का दर्शन, मंगल-करण रहा॥

ॐ ह्रीं मंगलकर्त्ता भूपालजिनचतुर्विंशतिका-स्तोत्र-आराध्य श्रीजिनेन्द्राय अर्घ्यं...।

२०. मनोकामनापूरक

(शार्दूलविक्रीडित)

त्वं धर्मोदयतापसाश्रमशुकस्त्वं काव्यबन्धक्रम-
क्रीडानन्दनकोकिलस्त्वमुचितः श्रीमल्लिकाषट्पदः।
त्वं पुन्नागकथारविन्दसरसी - हंसस्त्वमुत्तंसकैः
कैर्भूपाल! न धार्यसे गुणमणिस्त्रङ्मालिभिर्मौलिभिः॥

धर्म तपोवन के तुम तोता, हे! जग पालक हो।
काव्य छन्द नन्दनवन के तुम, कण्ठ कोकिला हो॥
महाकथा के कमल सरोवर, के तुम हंसा हो।
धरें तुम्हें मणिमुकुटमाल में, सब की मंशा हो॥

ॐ ह्रीं मनोकामनापूरक भूपालजिनचतुर्विंशतिका-स्तोत्र-आराध्य श्रीजिनेन्द्राय अर्घ्यं...।

२१. सुखकर्त्ता

(मालिनी)

शिवसुखमजरश्रीसङ्गमं चाभिलष्य
स्वमभिनियमयन्ति क्लेशपाशेन केचित्।
वयमिह तु वचस्ते भूपतेर्भावयन्त-
स्तदुभयमपि शश्वल्लीलया निर्विशामः॥

कितने मानव शिवसुख पाने, सुरसुख पाने को।
तरह-तरह के खुद को दुख दे, लगे तपाने को॥
पर हम भक्त जगत-पालक की, आज्ञा को पालें।
अतः सहज ही स्वर्ग मोक्षसुख, बस यूँ ही पा लें॥

ॐ ह्रीं सुखकर्त्ता भूपालजिनचतुर्विंशतिका-स्तोत्र-आराध्य श्रीजिनेन्द्राय अर्घ्यं...।

२२. कल्याणकर्त्ता

(शार्दूलविक्रीडित)

देवेन्द्रास्तव मज्जनानि विदधुर्देवाङ्गना मङ्गला-
न्यापेठुः शरदिन्दुनिर्मलयशो गन्धर्वदेवा जगुः।
शेषाश्चापि यथानियोगमखिलाः सेवां सुराश्चक्रिरे
तत्किं देव वयं विदध्म इति नश्चित्तं तु दोलायते॥

नाथ! आपका सुर-इन्द्रों ने, जिन-अभिषेक किया।
गन्धर्भों ने शरदचन्द्र सम, शुभ यशगान किया॥

मंगलपाठ देवियाँ करतीं, शेष करें सेवा।
अब हम लोग करें क्या इससे, चिन्तित हैं देवा॥

ॐ ह्रीं कल्याणकर्त्ता भूपालजिनचतुर्विंशतिका-स्तोत्र-आराध्य श्रीजिनेन्द्राय अर्घ्यं...।

२३. वचनागोचर

देव त्वज्जननाभिषेकसमये रोमाञ्चसत्कञ्चुकै-
र्देवेन्द्रैर्यदनर्ति नर्त्तनविधौ लब्धप्रभावैः स्फुटम्।
किञ्चान्यत्सुरसुन्दरीकुचतटप्रान्तावनद्धोत्तम -
प्रेङ्खद्वल्लकिनादझङ्कृतमहो तत्केन संवर्ण्यते॥

इन्द्र जन्म अभिषेक समय में, कर शृंगार नचे।
रोमांचक वस्त्रों को धारे, करके नृत्य सजे॥
तथा देवियों की वीणा का, जो संगीत हुआ।
वह वर्णन किससे हो सकता, यह आश्चर्य हुआ॥

ॐ ह्रीं वचनागोचर भूपालजिनचतुर्विंशतिका-स्तोत्र-आराध्य श्रीजिनेन्द्राय अर्घ्यं...।

२४. आनन्दप्रदाता

देव त्वत्प्रतिबिम्बमम्बुजदलस्मेरेक्षणं पश्यतां
यत्रास्माकमहो महोत्सवरसो दृष्टेरियान्वर्तते।
साक्षात्तत्र भवन्तमीक्षितवतां कल्याणकाले तदा
देवानामनिमेषलोचनतया वृत्तः सः किं वर्ण्यते ॥

कमलकली सम नयन खुले यों, बिम्ब आपका देव।
आँखों को आनन्द हुआ जो, उसका क्या उल्लेख॥
तो कल्याणों के दर्शन जो, देव करें अनिमेष।
कितना वो आनन्द लूटते, कह ना सकें वह लेश॥

ॐ ह्रीं आनन्दप्रदाता भूपालजिनचतुर्विंशतिका-स्तोत्र-आराध्य श्रीजिनेन्द्राय अर्घ्यं...।

२५. चिन्तामणि

दृष्टं धाम रसायनस्य महतां दृष्टं निधीनां पदं
दृष्टं सिद्धरसस्य सद्म सदनं दृष्टं च चिन्तामणेः।
किं दृष्टेरथवानुषङ्गिकफलैरेभिर्मयाद्य ध्रुवं
दृष्टं मुक्तिविवाहमङ्गलगृहं दृष्टे जिनश्रीगृहे ॥

जिन श्री गृह के दर्शन करके, लखा रसायन धाम।
मिला महानिधियों का आलय, पाया औषध धाम॥
देख लिया चिंतामणि मंदिर, जिन-मंदिर आके।
हो नमोऽस्तु भूपाल आपको, तेरे गुण गाके॥

ॐ ह्रीं चिन्तामणि भूपालजिनचतुर्विंशतिका-स्तोत्र-आराध्य श्रीजिनेन्द्राय अर्घ्यं...।

२६. भक्तभावनापूरक

दृष्टस्त्वं जिनराजचन्द्र! विकसद्भूपेन्द्रनेत्रोत्पले
स्नातं त्वन्नुतिचन्द्रिकाम्भसि भवद्विद्वच्चकोरोत्सवे।
नीतश्चाद्य निदाघजः क्लमभरः शान्तिं मया गम्यते
देव! त्वद्गतचेतसैव भवतो भूयात्पुनर्दर्शनम् ॥

हे! जिनचन्द्र दर्श कर तेरे, वह आनन्द हुआ।
फूले नेत्र कमल ज्यों नृप के, ज्ञानी शोर हुआ॥
वन्दन जल से नहा आज मैं, खेद समाप्त करूँ।
पुनः-पुनः जिनदर्शन हो ये, 'सुव्रत' हृदय धरूँ॥

ॐ ह्रीं भक्तभावनापूरक भूपालजिनचतुर्विंशतिका-स्तोत्र-आराध्य श्रीजिनेन्द्राय अर्घ्यं...।

जाप्य मंत्र—ॐ ह्रीं श्रीं क्लीं अर्हं श्रीसर्वजिनेन्द्राय नमो नमः।

जयमाला

(ज्ञानोदय)

जो अज्ञान पाप के कारण, दर-दर अपमानित होते।
सहें उपेक्षा की पीड़ाएँ, असफल होकर नित रोते॥१॥
अतः अशिक्षित आत्म दशा से, खेद-खिन्न ना होना रे।
किन्तु अर्चना जिनवर की कर, सुखिया ज्ञानी होना रे॥२॥
ऐसे ही भूपाल नाम के, राजपुत्र अज्ञानी थे।
जगह-जगह पा तिरस्कार को, होते पानी-पानी थे॥३॥
लघुभ्राता भुजपाल बताए, श्रद्धा रखो जिनेश्वर पर।
सो भूपाल साधना करने, पहुँचे गंगा के तट पर॥४॥
ब्राह्मी देवी प्रकट हुई तो, विद्या का पाकर वरदान।
अलंकार व्याकरण न्याय वा, बने संस्कृत के विद्वान॥५॥

तब काशी में दिखे न कोई, उनके जैसा ज्ञानी भाई।
सो भूपाल चतुर्विंशतिका, लिखकर जिनमहिमा गाई॥६॥
महाकवि भूपाल धुरन्धर, बने महाज्ञानी विद्वान।
जिनमहिमा के अतिशय न्यारे, मन्दबुद्धि पाते सद्ज्ञान॥७॥
सुख समृद्धि धर्म सम्पदा, पाकर भक्त बनें भगवान।
सो 'विद्या' के 'सुव्रत' चाहें, जिनमहिमा से सुख निर्वाण॥८॥

(दोहा)

भूपाल चतुर्विंशति हरे, व्यसन पाप अज्ञान।
सो नमोऽस्तु प्रभु को करें, करने निज कल्याण॥

ॐ ह्रीं श्रीं क्लीं अर्हं श्री भूपालजिनचतुर्विंशतिका-स्तोत्र-आराध्य श्रीजिनेन्द्राय अनर्घपद-प्राप्तये जयमाला पूर्णार्घ्यं...।

(दोहा)

भूपाल चतुर्विंशति करे, विश्वशान्ति कल्याण।
प्रासुक जल की धार दे, हम पूजत भगवान॥

(शान्तये शान्तिधारा)

कल्पवृक्ष के पुष्प सम, पुष्पांजलि पद लाए।
भव दुःखों को मेंट दो, भूपालक जिनराय॥

(पुष्पांजलिं....)

===

प्रशस्ति

(दोहा)

कोरोना के काल में, सीखा सम्यग्ज्ञान।
चौबीसी श्रीपाल का, 'सुव्रत' लिखे विधान॥
अल्पबुद्धि छद्मस्थ मैं, श्रुत सिद्धान्त अपार।
कमियाँ अतः सुधार के, शुद्ध पढ़ें हो पार॥
रविपुष्प में शिवपुरी, आठ नवम्बर बीस।
'विद्या' के 'सुव्रत' रचे, गुरु प्रभु को नतशीश॥

===

आरती—श्री पंचपरमेष्ठी

जिनवर की बोलो जय-जय रे, आरतिया उतारो।
हाँ-हाँ रे...आरतिया उतारो॥

1. पहली आरती श्रीजिनराजा, भवदधि पार उतार जहाजा।
2. दूसरी आरती सिद्धन केरी, सुमरन करत मिटै भव फेरी।
3. तीसरी आरती सूरि मुनिन्दा, जनम-मरण दुख दूर करिन्दा।
4. चौथी आरती श्री उवझाया, दर्शन देखत पाप पलाया।
5. पाँचवी आरती साधु तिहारी, कुमति विनाशन शिव अधिकारी।

===

श्री पंच स्तोत्र—आरती

(छूम छूम छना...ननना...)

छूम छूम छना ननना बाजे, बाबा करूँ आरतिया।
करूँ आरतिया बाबा करूँ आरतिया॥ छूम छूम....
पूज्य पंचस्तोत्र निराले, ज्ञान ज्योति के रहे उजाले-२
प्रभुवर की गुणमाला, बाबा करूँ आरतिया॥ करूँ...
धर्म भक्ति पकटाने वाले, अतिशय खूब दिखाने वाले-२
मोक्षमार्ग के साथी, बाबा करूँ आरतिया॥ करूँ...
कर्म रोग उपसर्ग विजेता, मोक्षमार्ग भक्तों के नेता-२
मुक्तिवधू के स्वामी, बाबा करूँ आरतिया॥ करूँ...
दुख संकट भय भूत मिटाओ, ऋद्धि-सिद्धि सुखशान्ति दिलाओ
'सुव्रत' को भी तारो, बाबा करूँ आरतिया॥ करूँ...

===

पंचमहागुरु भक्ति (प्राकृत)

(चामर)

मणुय णाइंद-सुर-धरिय-छत्तत्तया, पंचकल्लाण-सोक्खावली-पत्तया।
दंसणं णाण झाणं अणंतं बलं, ते जिणा दिंतु अम्हं वरं मंगलं॥
जेहिं झाणग्गि-बाणेहिं अइ-दड्ढयं, जम्म-जर-मरण-णयरत्तयं दड्ढयं,
जेहिं पत्तं सिवं सासयं ठाणयं, ते महं दिंतु सिद्धा वरं णाणयं॥
पंच-आचार-पंचग्गि-संसाहया, बारसंगाइ-सुअ-जलहि-अवगाहया।
मोक्ख-लच्छी महंती महं ते सया, सूरिणो दिंतु मोक्खंगयासंगया॥
घोर-संसार-भीमाडवी-काणणे, तिक्ख-वियरालणह-पाव-पंचाणणे।
णट्ठ-मग्गाण जीवाण पहदेसिया, वंदिमो ते उवज्झाय अम्हे सया॥
उग्ग तव चरण करणेहिं झीणं गया, धम्म वर झाण सुक्केक्क झाणं गया।
णिब्भरं तव सिरी ए समा लिंगया, साहवो ते महं मोक्ख पह मग्गया॥
एण थोत्तेण जो पंचगुरु वंदए, गुरुय-संसार-घण-वेल्लि सो छिंदए।
लहइ सो सिद्ध सोक्खाइ बहुमाणणं, कुणइ कम्मिंधणं पुंज पज्जालणं॥

(आर्या)

अरुहा सिद्धा-इरिया उवझाया साहु पंचपरमेट्ठी।
एयाण-णमोयारा भवे भवे मम सुहं दिंतु॥

इच्छामि भंते! पंचमहागुरु-भत्ति काउस्सग्गो कओ, तस्सालोचेउं, अट्ठ-महा-पाडिहेर-संजुत्ताणं अरिहंताणं, अट्ठ-गुण-संपण्णाणं उड्ढ-लोय-मत्थयम्मि पइट्ठियाणं सिद्धाणं, अट्ठ-पवयण-मउ-संजुत्ताणं आयरियाणं, आयारादि-सुद-णाणो-वदेसयाणं, उवज्झायाणं, ति-रयण गुण पालणरयाणं सव्वसाहूणं, णिच्चकालं, अञ्चेमि, पूजेमि, वंदामि, णमंसामि, दुक्खक्खओ, कम्मक्खओ, बोहिलाहो, सुगइगमणं, समाहिमरणं, जिणगुण-संपत्ति होदु मज्झं।